CHAPTER 21

HINDI

Doctoral Theses

01. अजय प्रकाश
हिंदी उपन्यासों में प्रेम का बदलता स्वरूप (संदर्भ : जैनेन्द्र, अज्ञेय और यश्पाल)।
निर्देशक : डॉ. रामेश्वर राय
Th 23182

विषय सूची

1. उन्नीसवीं शताब्दी के हिन्दी उपन्यासों में प्रेम और रोमांस (चंद्रकांता, श्यामास्वप्न, सौन्दर्योपासक विशेष संदर्भ में) 2. पेंमचंद युगीन हिन्दी उपन्यासों में प्रेम की अवधाराणा और प्रेम की कथाभूमि (संदर्भ- प्रेमचंद के उपन्यास) 3. जैनेन्द्र की कथाभूमि 4. अज्ञेय की कथाभूमि 5. यशपाल की कथाभूमि। उपसंहार। आधार ग्रंथ सूची।

02. अभिषेक कुमार
हिंदी दलित साहित्य और राजनीति का अंतस्संबंध।
निर्देशक : डॉ. रामेशवर राय
Th 23108

सारांश
(असत्यापित)

प्रबंध दलित साहित्य और दलित राजनीति के आपसी जुडाव को विषयवस्तु बनाता है |यहाँ दलित साहित्य और दलित राजनीति की समीपता का मूल आधार अम्बेडकर का चिंतन है, जो न केवल राजनीति और साहित्य के यथार्थ को समझने की क्षमता प्रदान करता है अपितु आदर्श की प्राप्ति के निर्णय और मार्ग की तार्किक प्रस्तुतिइ करता है | क्योंकि साहित्य और राजनीति की कार्यनीति अलगउद्देश भी दोनों का होते हुए अलग - सामाजिक सरोकारों से जुड़ा हुआ है | दोनों ही समाज के उस वर्ग के पक्षधर हैं जो सदियों से शोषित थे ; जिनमे स्वतंत्र चिंतन और चेतना का विकास नहीं हो पाया है| २१वीं सदी के भारत में भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप परिवेश में दलित राजनीति और साहित्य ,चिंतन व व्यवहार के विभेद से जूझ रही है |जहाँ स्वानुभूति और सहानुभूति की छवियाँ चाहे वो दलित वर्ग की हों या गैर दलित वर्ग की संशय की स्थिति बनाये रखती है आजादी के बाद देश में जनतंत्र की स्थापना . यह संशय राजनीति और साहित्य दोनों में गहराता गया है . के साथ दलितों को राजनीति मताधिकार तो प्राप्त हो गया लेकिन सामाजिक सांकृतिक अधिकार मिलना अभी शेष है में यह स्पष्ट किया गया है कि राजनीति और साहित्य के पुरोधा जिन लक्ष्यों को लेकर समाज शोध . यह भटकाव साहित्य में क .चूल बदलाव करना चाहते थे वे उनसे कहीं न कहीं भटक से गए हैं- आमूलम और राजनीति में ज्यादा हैं ,इन्हीं पक्षों के विविध सन्दर्भों को शोध में विस्तार से देखा परखा गया है.

विषय सूची

1. दलित राजीति की पृष्ठभूमि 2. दलित साहित्य का सूत्रपात 3. दलित राजनीति और दलित साहित्य 4. दलित साहित्य के विविध विधाओं में राजनीतिक चेतना 5. समकालीन राजनीतिक परिदृश्य और दलित रचनाशीलता का अंतःसंबंध। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

03. कुलदीप कुमार
रीतिकालीन कवि आचार्य और भिखारीदास।
निर्देशक : डॉ. विनोद तिवारी
Th 22713

सारांश
(असत्यापित)

हमने अपने शोध प्रबंध में निम्न 'कवि आचार्य' के विवेचन को शामिल किया है केशवदास पृष्ठभूमि के रूप में, चिंतामणि, देव, सूरति मिश्र, सोमानाथ, भिखारीदास तथा प्रतापसाहि इन सभी कवि आचार्याेंं के कृतित्व का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। पहले एक विषय पर विभिन्न कवि आचार्याेंं के मतों का एक स्थान पर ही विवेचन करने का प्रयास किया उसमें, इस कवि आचार्य में यह विवेचन नहीं है, इसका उल्लेख इस कवि आचार्य ने नहीं किया है। ऐसा लिखना कुछ सही महसूस नहीं हुआ, फिर एक काव्यांग पर पहले एक कवि आचार्य कासम्पूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया, फिर दूसरे का सम्पूर्ण विवेचन किया इसी तरह क्रमशः सभी का वर्णन किया है। विवेचन करते हुए उसमें जो कुछ विशेषता या अपूर्णता दिखाई दी, उसका वहीं उल्लेख करके प्रत्येक कवि आचार्य के उस काव्यांग विवेचन के समाप्त होने पर उसका निष्कर्ष प्रस्तुत कर दिया है। क्रमशः इसी तरह सभी का विवरण प्रस्तुत करके उस काव्यांग विवेचन के अंत में सभी की कमियों व विशेषताओं को देखते हुए उस काव्यांग के सबसे उपयुक्त विवेचक आचार्य का कथन किया है। जहां वर्णन सामान्य ही रहा है उसके संबंध में कवि कामत प्रस्तुत किया है। रीतिकालीन काव्यशास्त्राीय ग्रंथों पर लिखित आलोचनात्मक पुस्तकें या फिर शोध प्रबंध में इन रीतिकारों के ग्रंथों की तुलना संस्कृत के ग्रंथों से इनके लेखक करते दिखायी देते हैं। संस्कृत के काव्यशात्रीय ग्रंथों में वर्णन साम्य दिखाकर इन पर ऐसा आरोपलगाया जाता है कि इन्होंने तो यह बात संस्कृत के उस ग्रंथ से ली हैं और इसमें कोई मौलिकता नहीं है। हिन्दी के रीतिग्रंथकारों का दोष तब होता जब यह आधार ग्रंथों का उल्लेख न करते । रीतिकाल के अधिकतर कवि आचार्याेंं नेअपने ग्रंथों में इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया है कि मैंने किन संस्कृत ग्रंथों का आधार ग्रहण किया है।

विषय सूची

1. रीतिकालीन कवि आचार्यों के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय 2. रीतिकालीन कवि आचार्यों का काव्यस्वरूप विवेचन 3. रीतिकालीन कवि आचार्यों का शब्द शक्ति, ध्वनि विवेचन 4. रीतिकालीन कवि आचार्यों का दोष, गुण एवं वृत्ति (रीति) विवेचन 5. रीतिकालीन कवि आचार्यों का रस एव ंनायक-नायिका भेद विवेचन 6. रीतिकालीन कवि आचार्यों का अलंकार विवेचन 7. रीतिकालीन कवि आचार्यों का छंद विवेचन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

04. केस्टवाल (सुधांशू मोहन)

सामाजिक राजनैतिक परिदृश्य के संदर्भ में रघुवीर सहाय और श्रीकान्त वर्मा की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन।

निर्देशक : डॉ. अवनिजेश अवस्थी

Th 22716

सारांश

(असत्यापित)

प्रस्तुत शोधप्रंध सामाजिक राजनैतिक परिदृश्य के संदर्भ में रघुवीर सहाय और श्रीकांत वर्मा की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास करता है। प्रथम अध्याय समकालीन कविता को परिचयात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। द्वितीय अध्याय रघुवीर सहाय की कविताओं की सामाजिक राजनैतिक परिदृश्य की दृष्टि से समीक्षा करने की कोशिश करता है तृतीय अध्याय सामाजिक राजनैतिक परिदृश्य की दृष्टि से श्रीकांत वर्मा की कविताओं को परखने की चेष्टा करता है। चतुर्थ अध्याय में इसी दृष्टि से दोनों कवियों कविताओं का तुलनात्मक विष्लेषण करने की कोशिश की गई है। पंचम अध्याय शिल्पविधान की दृष्टि से दोनों कवियों की कविता का परिचय देता है। शोधप्रबंध के अंत में उपसंहार और परिशिष्ठ दिया गया है।

विषय सूची

1. स्वातंत्रयोत्तर भारत का सामाजिक-राजनैतिक परिदृश्य और समकालीन कविता 2. रघुवीर सहाय की कविताओं का समाजिक-राजनैतिक संदर्भ 3. स्वातंत्रयोत्तर भारतीय समाज और राजनीति तथा श्रीकान्त वर्मा की कविता 4. बदलता स्वातंत्रयोत्तर भारतीय समाज और राजनीतिः प्रतिक्रिया और प्रभाव की दृष्टि से रघुवीर सहाय तथा श्रीकांत वर्मा की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन 5. रघवीर सहाय एवं श्रीकांत वर्मा की कविताओं का शिल्प विधान। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

05. गीता देवी

साम्प्रदायिक परिदृश्य में जेंडर का प्रश्न (स्वातंत्र्योत्तर प्रमुख हिन्दी उपन्यासों के संदर्भ में)।

निर्देशक : प्रो. हरिमोहन शर्मा

Th 22715

सारांश

(असत्यापित)

वर्तमान भारत में साम्प्रदायिकता से विकट और कोई समस्या नहीं है। साम्प्रदायिकता ऐसा विध्वंसात्मक स्वरूप है जो मनुष्य को उसकी मनुष्यता से काटकर केवल घृणा का प्रारूप बना देती है। साम्प्रदायिकता आधुनिक काल की परिघटना है, जो आर्थिक वैषम्य और सामाजिक अन्याय पर आधारित व्यवस्था से जन्मती है। भारत में साम्प्रदायिकता का उद्भव 19वीं शताब्दी में औपनिवेशिक शासन की स्थापना के पश्चात् हुआ। इतिहास में देश को जितने घाव साम्प्रदायिकता ने दिए हैं उतने और किसी घटना या भावना ने नहीं दिए।साम्प्रदायिकता घृणा, डर, शंका का वातावरण निर्मित करती है। भारत में साम्प्रदायिकता विघटन और विभाजन की शक्ति के रूप में उभरी है। हिंसा के कारण देश में धन की ही नहीं, सबसे बड़ी मानवीय हानि भी हुई है। साम्प्रदायिकता से निर्दोष सामान्य जन को अधिक क्षति पहुँचती है। इनमें स्त्रियों की संख्या सबसे अधिक है। साम्प्रदायिकता पितृसत्ता को पोषित करती है। पितृसत्ता स्त्री को स्वतंत्र व्यक्तित्व न मानकर परिकार, सम्प्रदाय की सम्पत्ति मानती है। आपसी शत्रुता

की स्थिति में विरोधी के स्वाभिमान पर चोट पहुँचाने, अपमानित करने के लिए स्त्रियों के साथ विभिन्न प्रकार के अत्याचार किए जाते हैं। पितृसत्ता और साम्प्रदायिकता वर्चस्वशाली विचारधाराओं से सम्बन्ध रखती हैं, इस कारण साम्प्रदायिक, जातीय अथवा राज्य नियोजित जैसी भी हिंसा हो उसका सर्वाधिक असर स्त्री पर ही पड़ता है। भारतीय इतिहास स्त्रियों पर होने वाली हिंसा पर मौन है, किंतु साहित्य साम्प्रदायिकता और स्त्री पर हुई बर्बर हिंसा पर मौन नहीं है। स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी उपन्यास इस संबंध में अधिक समृद्ध स्त्रोत हैं क्योंकि साम्प्रदायिकता पर इसमें अधिक जनप्रिय व बेबाक टिप्पणियाँ होने के साथतहाँ नारी स्वर भी उन्हीं की आवाजों में सुनाई -साथ जहाँ- देते हैं। इसलिए उपन्यासों में इन समस्याओं को जेंडर की दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है।

विषय सूची

1. साम्प्रदायिकता और जेंडर की अवधारणा 2. साम्प्रदायिकतापरक उपन्यासों में साम्प्रदायिकता और जेंडर के प्रश्न 3. साम्प्रदायिक परिदृश्य में जेंडर की छवियां-उपन्यासों के संदर्भ में 4. उपन्यासों में वर्गीय चरित्रों का साम्प्रदायिकता और जेंडर के प्रति दृष्टिकोण 5. उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द की चेतना और जेंडर दृष्टि। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

06. गौतम (पूनम)
समकालीन हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में विद्रोही नारी पात्र।
निर्देशिका : डॉ. अरूणा गुप्ता
Th 23103

सारांश
(असत्यापित)

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में नारी पितृसत्तात्मक समाज की गुलाम रही है। नारी की धैर्यता सहनषीलता और उसके समर्पण का पुरूष समाज ने अपनी सुविधा और अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए उपयोग किया। भारत की यह अबला नारी, पुरूष द्वारा किये जा रहे शोषण को चुपचाप सहती रही। समय के साथ परिस्थितियों मंे भी परिवर्तन आए। षिक्षा के प्रसार से नारी भी अपने अधिकारों के लिए सजग हुई। आज की आधुनिक नारी शोषण से मुक्ति के लिए संघर्षरत है। नारीवादी लेखिकाओं में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, मेहरून्निसा परवेज, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, मंजुल भगत ने अपना अप्रतिम योगदान दिया। समाज का यह दोयम या नगण्य कहा जाने वाला स्त्री वर्ग अपनी जुझारू प्रवृति के कारण अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत दिखायी पड़ता है। केवल साहित्य ही नहीं यथार्थ में भी इसका प्रभाव देखने को मिलता है जहां स्त्री अपने अधिकारों को समझने और इस्तेमाल करने लगी है और षिक्षा के महत्व की शक्ति को पहचानते हुए नारी शक्ति का एक नया उदाहरण प्रस्तुत करने में कोई भी कसर नहीं छोड़ रही है। यह संघर्ष और विद्रोह की स्थिति आयी कहाँ से और इसका कारण कौन है? और इसका उत्तर केवल इतना है कि हमारा प्रकार से किया जाता पोषण ही इस-पालन (पुरूष-स्त्री) है कि स्त्री की सोच आरंभ से ही पंगु बना दी जाती है जाति, लिंग, व्यवस्था, और दोगले संस्कारों के नाम पर। यही कारण है अत्याचार को बढ़ावा मिलने का और जीवन को पुनः स्थापित और निर्मित्त करने हेतू जिस प्राण वायु की आवष्यकता पड़ती है उसके लिए संघर्ष और विद्रोह करने की प्रक्रिया आरंभ होती है अन्यथा मूक बनकर जीना मृत्यु के समान है।

विषय सूची

1. भारतीय चिंतन परंपरा में नारी 2. विद्रोह की परंपरा 3. जागरण का स्वर 4. विद्रोह के निमित्त 5. समाकलीन उपन्यासें में दलित नारी की विद्रोह भावना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

07. चारण (दिनेश)

लोक-स्मृति में रासो काव्य की उपलब्धता।

निर्देशक : प्रो. अनिल राय

Th 22732

सारांश

(असत्यापित)

रासो साहित्य का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। रासो साहित्य का विकास अपभ्रंश से प्रारम्भ होकर डिंगल व पिंगल तक आता है। जिस रासो साहित्य को हम हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल तक ही सीमित करके देखते है वह राजस्थान में 20वीं शाताब्दी तक लिखा जा रहा है, जिसके प्रमाण इस प्रबन्ध में दिये गये है। रासो काव्य को लेकर जो भ्रामक स्थिति बनी हुई है कि यह वीरता और श्रंगार परक काव्य है, इस भ्रान्ति को तोडते हुए वास्तविक स्थिति को स्पष्ट किया गया है। साहित्य की जिस वाचिक परम्परा को लोक नें सहेज रखा है, उसी परम्परा में लोक स्मृति में रासो साहित्य भी कुछेक अंशो में सुरक्षित बचा है। राजस्थान के लोक गीतों में अनेक वीर गाथाएं, प्रेम गाथाएं आज भी सुरक्षित है। ''मत चूकि चव्हाण'' ओर ''तिरिया तेल हमीर हठ, चढे न दूजी बार'' जैसी लोक कहावतें तो आज भी हमारी लोक स्मृति मिल जाती है। राजस्थान की कुछ गायक जातियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों में रासो काव्यों के कुछ अंश देखने को मिलते है। लोक स्मृति में रासो काव्य की उपलब्धता विषय के अन्तर्गत रासो साहित्य की ऐतिहासिक, उनकी उपलब्धता, लोक में प्रचलित कथाओं, गीतों आदि को आधार बनाकर विषय से संबंधित नवीन तथ्यों की खोज करने का प्रयास किया गया है। रासो काव्य की एक शैली है जिसमें विशेष रुप से राजस्थान में रचनाएं प्राप्त होती है। ये रचनाएं चरित्र प्रधान, श्रंगारिक, धार्मिक, हास्य व्यंग्यात्मक आदि है। इस शोध प्रबन्ध में अध्यायों का विवरण इस प्रकार से किया गया है – रासो काव्य परम्परा एवं विकास, लोक, लोक स्मृति एवं लोक साहित्य, रासो साहित्य की विवेचना, रासो रुप की अन्य रचनाएं, रासो रुप के ऐतिहासिक काव्य, लोक स्मृति में रासों काव्य, लोक स्मृति में पृथ्वीराज रासो। इनके साथ ही सम्पूर्ण सन्दर्भ इस प्रबन्ध में तथ्यों सहित उपलब्ध है।

विषय सूची

1. रासो काव्य परम्परा एवं विकास 2. लोक, लोक स्मृति एवं लोक साहित्य 3. रासो साहित्य की विवेचना 4. रासो रूप की अन्य रचनाएं 5. रासो रूप के ऐतिहासिक काव्य 6. लोक स्मृति में रासो काव्य 7. लोक स्मृति में पृथ्वीराज रासो 8. उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

08. ज्योत्स्ना कुमारी

भूमंडलीकरण के संदर्भ में उदय प्रकाश का कथा-साहित्य।

निर्देशक : डॉ. मंजु मुकुल काम्बले

Th 22727

सारांश

(असत्यापित)

भूमंडलीकरण पिछले दो दशकों के सबसे ज्यादा चर्चित समाजशास्त्रीय 'पदों' में से एक है। 'वाशिंगटन आम राय 1989' से सैद्धांतिक आधार ग्रहण कर पूरे विश्व में आर्थिक उदारवाद के नव उपनिवेशवादी दौर का प्रारंभ हुआ। भारत में इसको सैद्धांतिक मंजूरी 1991 में 'रावमनमोहन मॉडल-' के विकास के नव उदारवादी इंजन के रूप में मिली। इस भूमंडलीकरण में राज्य की आर्थिक भूमिका को न्यूनतम करने और निजीकरण पर बल दिया गया

था।भूमंडलीकरण ने निस्संदेह मनुष्य के जीवन को सुखसुविधाओं से लैस कर दिया है और आम जनता इसकी - चकाचैंध में फँस चुकी है। परन्तु वास्तव में वैश्विक स्तर पर आर्थिक विषमता दिनप्रतिदिन बढ़ती चली जा रही - है। इसके दूरगामी भयावह परिणामों को देखते हुए पूरे विश्व के प्रायः सभी साहित्यकारों ने भूमंडलीकरण, बाजारवाद तथा पूँजीवाद का विरोध किया है। इनमें उदय प्रकाश का नाम अग्रगण्य है।भूमंडलीकरण से उपजी उपभोक्तावादी संस्कृति और बाजारवाद के साथ उत्तरउपनिवेशवाद के विरुद्ध सशक्त प्रतिरोध उदय प्रकाश की कहानियों का मूल - स्वर है। उदय प्रकाश की कहानियों का केन्द्रीय बिम्ब उपभोक्तावादी संस्कृति के विरुद्ध आम आदमी के संघर्ष का, वैश्वीकरण के समकालीन परिवेश में मूल्यों का क्षरण, लुप्त होती संस्कृति, जीवनशैली में परिवर्तन का - रचनात्मक चित्रण है। आज के'नए भावसत्य-' को अभिव्यक्त करने के लिए वे हमें एक ऐसे भिन्न और उत्तेजक कथासंसार में ले जाते हैं जहाँ न केवल कहानी का स्वरूप बदला हुआ है वरन् कहानी-कार की संवेदना में भी नयापन है। आज के जटिल यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए वे अनेक कलायुक्तियों का प्रयोग करते हैंजादुई - यथार्थवाद, फैंटेसी, रूपक, किस्सागोई, उपशीर्षक शैली, कोष्ठक शैली, भूमिका शैली, आउटडुअल शैली इत्यादि। हिन्दी कहानी के ऐसे समय में जबकि अधिकांश कहानियाँ एक ढर्राबद्धता को अपनाए हुए हैं, उदय प्रकाश की प्रयोगधर्मिता हिन्दी कहानी के सुदृढ़ भविष्य की ओर संकेत करती है।

विषय सूची

1. भूमंडलीकरण : पुष्ठभूमि 2. उदय प्रकाश की कथा-यात्रा 3. उदय प्रकाश की कहानियों की अन्तर्वस्तु और भूमंडलीकरण 4. उदय प्रकाश के कथा-साहित्य में पात्र और परिवेश 5. उदय प्रकाश की कहानियों की संरचना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

09. त्रिपाठी (प्रीति)

तुलसी साहित्य के सन्दर्भ में भक्ति का मनोविज्ञान।

निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह

Th 23105

सारांश

(असत्यापित)

मेरा शोध विषय है-"तुलसी साहित्य के सन्दर्भ में भक्ति का मनोविज्ञान"। इस शोध -प्रबन्ध का सार है-"भक्ति मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्तियों में से एक है। हर मनुष्य को भूख मिटाने के लिए भोजन के उपरान्त, भय मिटाने के लिए सुरक्षा चाहिए। शायद इसीलिए उसने एक ऐसी सर्वशक्तिमान सत्ता की कल्पना की, जिसकी शरण में जाकर मनुष्य अपने को भयमुक्त महसूस कर सकता है। इसी क्रम में प्रस्तुत शोधप्रबन्ध के विवेच्य कवि तुलसीदास को - अपने बाल्यावस्था के अनाथत्व बोध से निकालने में राम की भक्ति बड़ी सहायक होती है; किन्तु यह संरक्षण एकतरफा नहीं है। तुलसी के भक्त होने के कारण यदि राम के रूप में उन्हें व्यक्तिगत संरक्षण मिलता है तो राजा व 'शरचापधर' होने के कारण जन सामान्य को भी सामाजिक संरक्षण प्राप्त होता है। वे मध्यकाल में राजतंत्र के निरंकुश, विलासी, भोगप्रधान वातावरण के बरक्स रामराज्य के लोकतांत्रिक-, त्यागमय व सहज अनुशासित वातावरण का एक काल्पनिक प्रतिसंसार रचते हैं क्योंकि तुलसीदास का सामाजिक मन यह जानता है कि जो प्रभु विपत्ति में भक्त की सहायता नहीं कर सकता, संकट से उबार नहीं सकता। उसमें 'संरक्षण प्राप्ति की कामना' पूर्ण न हो पाने के कारण मानवीय वृत्तियाँ कैसे रम सकेगी? अतः तुलसी के मत में सगुण ब्रह्म के प्रति रति की अधिकता का प्रमुख कारण उनकी समाज मनोविज्ञान सम्बन्धी समझ है। तुलसी का पत्नी के प्रति दमित कामभाव (लिबिडो) अपने -नगेन्द्र का विचार है कि .कालान्तर में रामप्रेम में परिणत होता है। इस सन्दर्भ में डॉ कामभाव का उन्नयन तो "तुलसी ने व्यक्तिगत साधना द्वारा कर लिया, परन्तु चूँकि यह परिवर्तन सहज एवं क्रमिक प्रक्रिया द्वारा न

होकर एक झटके से हुआ था, अतः यह ग्रन्थि उनके मन में रह गयी और उनकी आत्मग्लानि जीवनभर न तो अपने आतुर मन को क्षमा कर सकी और न उस आतुर मन की बाह्य प्रतीक नारी को।

विषय सूची

1. भक्ति का उद्‌भव और विकास 2. साहित्य और मनोविज्ञान का अन्तःसम्बन्ध 3. तुलसी साहित्य में अभिव्यक्त भक्ति का स्वरूप 4. तुलसी की रचना-प्रक्रिया में भक्ति और उसका मनोविज्ञान 5. तुलसी साहित्य में अभिव्यक्त भक्ति की नवीनता एवं प्रासंगिकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

10. तिवारी (नीरजा)
नरेश मेहता के साहित्य में परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व।
निर्देशक : प्रो. अनिल राय
Th 22706

सारांश
(असत्यापित)

नरेश मेहता के प्रदीर्घ साहित्य संसार की अंतर्वस्तु गहरी संवेदनाओ से निर्मित है | अपने साहित्य की अंतर्वस्तु से लेकर भाषा तक हर स्तर पर वे अपने समय के सामाजिक परिवेश तथा भारतीय परम्पराओ से संपृक्त है | नरेश मेहता के साहित्य सृजन का युग प्रयोगवाद तथा नई कविता से लेकर नवे दशक तक फैला हुआ है | उनकी आरम्भिक पहचान दूसरा सप्तक के कवि के रूप में बनी |नरेश मेहता ऐसे साहित्यकार रहे हैं जिन्होंने प्रत्येक विचारधारा व अवधारणा में जो कुछ भी सर्वोत्तम है उसे लिया है साथ ही उन्होंने वायवीयता के बजाय ठोस धरातल पर अपनी भावभूमि को प्रतिष्ठित किया है| परम्परा और आधुनिकता का द्‌वंद्‌व नरेश मेहता के समस्त रचना संसार में दिखाई पड़ता है | इस द्‌वंद्‌व के कारण ही उनके काव्य में आदिम राग चेतना में आधुनिक - जीवन संदर्भो के निशान दिखाई देते हैं| उनके काव्य रचना में मनुष्य एवं प्रकृति के संबध संयोंजन में यह द्‌वन्द स्पष्ट दिखाई देता है| उनके उपन्यासों में यह द्‌वन्द सयुंक्त परिवार विघटन एवं स्त्री पुरुष सम्बन्ध चित्रण में दिखाई देता है| कहानियों में यह द्‌वन्द प्रथम फाल्गुन, किसान का बेटा, रत्ना , मालनी , गोपा आदि पात्रो के माध्यम से दिखाई देता है| नाटको में यह द्‌वन्द गोपामहिम -, बालिस्टर कप्तान -, सफालो सरंद बाबु -, किरण शंकर दीपा आदि पात्रो के माध्यम से दिखाई देता है -| नरेश मेहता के सृजन संसार का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है की कोई रचनाकार परम्परा और आधुनिकता का सामंजस्य बिठाकर अपने रचना संसार को किस प्रकार एक नया आयाम दे सकता है !

विषय सूची

1. परम्परा और आधुनिकता 2. प्रयोगवाद और नरेश मेहता 3. नरेश मेहता के काव्य में परमपरा और आधुनिकता का द्वंद्व 4. नरेश मेहता के उपन्यासों में परम्परा ओर आधुनिकता का द्वंद्व 5. नरेश मेहता के नाटकों में परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व 6. नरेश मेहता की कहानियों में परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व 7. उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

11. नरेन्द्र कुमार
राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (दिल्ली) द्वारा मंचित मौलिक हिन्दी नाटकों में पार्श्वकर्म।
निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता
Th 23107

सारांश
(असत्यापित)

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय द्वारा मंचित मौलिक हिंदी नाटकों में पार्श्व कर्म अध्ययन शोध प्रबंध एक बेहद चुनोतिपूर्ण,रोचक अनुसंधान यात्रा की तरह है । संस्कृत से लेकर आज वैश्विक तकनीक प्रधान युग के नैपथ्य कर्म को एक साथ अध्ययन करना जिसके केंद्र में हिंदी के मौलिक नाटक रहे हैं, यह बेहद रोचक अध्ययन रहा। इस पूरे अध्ययन में अन्य भाषाओं के प्रदर्शन के नेपथ्य को देखने जानने को भी हमे मिलता है, जिससे एक शोधार्थी के रूप में मैं समझता हूँ कि बंगला व् मराठी रंगमंच की रंग तकनीक और पश्वरंग प्रयोग हिंदी के नाटकों के मंचन से थोड़े समृद्ध रहे हैं। हिंदी के मूल नाटक मूल रूप से हिंदी समाज की संवेदना और उनके समाज के इर्द गिर्द - ही बुने गए हैं, जिससे उसी समाज के वातावरण का सृजन रंग निर्देशकों ने उनके प्रदर्शन में किये। कुछ नाटकों के प्रदर्शन में प्रयोग के लिए विदेशी शैली व् वेशभूषा इत्यादि को प्रदर्शन में जोड़कर निर्देशकों ने जरूर कुछ अलग करने का प्रयास किया , लेकिन फिर अंत में पूरे शोधकार्य के बाद हमे यह लगता है कि रानावि ने समय की जरूरत के अनुसार हिंदी के मौलिक सहज नाटकों को वैश्विक धरातल पर स्थापना की है। हिंदी रंगमंच को वैश्विक स्वरुप देने के लिए ही पश्वमंच पर जरूरत के अनुसार अलग अलग तरह के मिश्रित प्रयोग किये गए हैं। इन प्रयोगों में कुछ अमंचित होने का दंश झेल रहे नाटक भी सफल मंचित होकर हमेशा के लिए यादगार हुए हैं, लेकिन कुछ नाटक प्रयोगों के लिए प्रयोग बनकर रह गए । अंत में कुल मिला कर हम यही कहा जायेगा की..रानावि ने हिंदी रंगमंच के विकास के लिए रंगमंच के पार्श्वकर्म में एक ऐतिहासिक कार्य किया है जिससे आज हिंदी रंगमंच की पहचान विश्व पटल पर अलग बनी है।

विषय सूची

1. पार्श्वकर्म : अवधारणा एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 2. पार्श्वकर्म के विविध तत्व 3. राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की स्थापना एवं उद्देश्य 4. राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय द्वारा मंचित मौलिक हिंदी नाटक 5. राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय द्वारा मंचित मौलिक हिंदी नाटकों में सन्निहित पार्श्वकर्म। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

12. नीरज

भूमंडलीकरण के अंतर्द्वंद्व और समकालीन हिन्दी कविता।

निर्देशक : डॉ. वीरेन्द्र भारद्वाज

Th 22707

सारांश
(असत्यापित)

हिन्दी कविता ने भूमंडलीकरण और उससे उत्पन्न बजारवाद को पराधीनता के नए दुष्चक्र के रूप मे देखा है। इसने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि कैसे एक आम आदमी के भीतर ही शोषक चरित्र का विकास किया जा रहा है। यह आम आदमी जो सिर्फ महानगरों को देश समझता है और देश के अमेरिका मे तब्दील हो जाने की आकांक्षा में जी रहा है न केवल समृद्धि की होड़ में शामिल होने की जल्दबाज़ी में है बल्कि ग्लोबल लूट का हिस्सा भी बनना चाहता है।तभी तो बाजार जैसे भीड़ वाले जगहों पर भी कुँवर नारायण अकेलापन महसूस करते है तो केदारनाथ सिंह सृष्टि पर बिठाए गए पहरे से व्यथित हैं। भगवत रावत आसमान छूते सेंसेक्स के देश का सूचकांक बनने से आशंकित हैं तो राजेश जोशी झुकने से माना कर इत्यादि के पक्ष मे खड़े हो जाते हैं। विज्ञापन से ढके खबरों से लीलाधर जगुड़ी चिंतित हैं तो एकांत श्रीवास्तव भारत का असली चेहरा पहचानने के लिए निषिद्ध रास्तों पर चलने की सलाह देते हैं।स्त्री कवयित्रियाँ बाजार और विज्ञापन के कारण देह के चिकने होते जाने से सजग हैं तो दलित और आदिवासी

लेखक भी ईश्वर से अपनी यातना का हिसाब मांगने के अलावा बाजार के साथ सत्ता के गठजोड़ का भी पर्दाफास करते हैं । यह भी सच्चाई है कि समकालीन कविता में किसान,बच्चे,पर्यावरण एवं उपेक्षित जीवन जैसे) विधवा,वृद्ध,तलाक और शारीरिक रूप से अक्षमइत्यादि को उतना स्पेस नही मिला है जितना यह विकराल होता जा (रहा है। लेकिन भूमंडलीय बाजार के विषमतापूर्ण चरित्र और जीवन से गायब होती रागात्मकता का लगभग हर आयाम इस कविता में उपलब्ध है। इसलिए वैश्विक दबाबों के प्रति संवेदनशील समकालीन हिन्दी कविता मे भूमंडलीकरण का मुकम्मल विमर्श आलोचनात्मक ढंग से उपस्थित हुआ है ।

विषय सूची

1. भूमंडलीकरण का स्वरूप, संदर्भ एवं इसके अंतर्द्वंद्व 2. समकालीनता और समकालीन हिन्दी कविता पृष्ठभूमि एवं विकास-क्रम 3. भूमंडलीकरण के अंतर्द्वंद्व और समकालीन हिन्दी कविता विविध संदर्भ 4. भूमंडलीकरण के अंतर्द्वंद्व और समकालीन हिन्दी कविता : विभिन्न अस्मिताओं के संदर्भ में। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

13. प्रवीन कुमार
काशीनाथ सिंह के साहित्य की भाषिक संरचना।
निर्देशिका : प्रो. कुसुम लता
Th 22731

सारांश
(असत्यापित)

मेरे शोध का उद्देश्य काशीनाथ सिंह के साहित्य की भाषिक संरचना है। शोध के विभन्न पहलुओं को देखते हुए मैंने अपने शोध प्रबंध को छह अध्यायों में विभक्त किया है। प्रथम अध्याय 'रचनाकार एवं रचनाधर्मिता' में काशीनाथ सिंह के जन्म एवं परिवार, बचपन, शिक्षा आदि को दिखाया गया है। इसके बाद काशीनाथ सिंह की रचनाओं में परिवेश और आधुनिक बोध को उजागर किया गया है। द्वितीय अध्याय 'भाषा पहचान और परख' के अंतर्गत भाषिक संरचना के निर्माण एवं स्वरूप को दिखाते हुए गद्य की भाषिक संरचना को स्पष्ट किया गया है। तृतीय अध्याय 'काशीनाथ सिंह के उपन्यास तथा उनकी भाषिक संरचना' के अंतर्गत काशीनाथ सिंह के उपन्यासों में लोकभाषा के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए इनके उपन्या-सों में वक्रोक्ति और व्यंग्य को दिखाया गया है। तत्पश्चात् इनके उपन्यासों में जीवन्त भाषा के आधार खोजते हुए भाषा के भदेसपन के सवाल पर भी प्रकाश डाला गया है। चतुर्थ अध्याय 'काशीनाथ सिंह की कहानियों की भाषिक संरचना' में काशीनाथ सिंह की कथा भाषा का समग्र मूल्यांकन करते हुए इनकी कथा भाषा और समसामयिक कथा भाषा में अन्तर स्पष्ट किया गया है। समसामयिक कथा भाषा में मनोहरश्याम जोशी, मृदुला गर्ग और शरद जोशी की कथा भाषा को लिया गया है। पंचम अध्याय 'हिन्दी संस्मरण परम्परा और काशीनाथ सिंह' के अंतर्गत काशीनाथ सिंह के संस्मरणों की भाषा में आत्म तत्व किस प्रकार उभर कर सामने आया है, इसे स्पष्ट किया गया है। तत्पश्चात् इनकी कथा भाषा तथा संस्मरण की भाषा में अन्तर दिखाया गया है। षष्ठ अध्याय 'काशीनाथ सिंह के साहित्य के अन्य रूपों की भाषिक संरचना' में काशीनाथ सिंह कृत 'घोआस' की नाट्य भाषा पर प्रकाश डाला गया है। इसके बाद 'लेखक की छेड़छाड़' की रचनात्मक भाषा को दिखाया गया है। अन्त में उपसंहार के अंतर्गत सम्पूर्ण शोध को सार रूप में प्रस्तुत किया गया है।

विषय सूची

1. रचनाकार एवं रचना धर्मिता 2. भाषा पहचान और परख 3. काशीनाथ सिंह के उपन्यास तथा उनकी भाषिक संरचना 4. काशीनाथ सिंह की कहानियों की भाषिक संरचना 5. हिन्दी संस्मरण परम्परा और काशीनाथ सिंह 6. काशीनाथ सिंह के साहित्य के अन्य रूपों की भाषिक संरचना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

14. पाण्डेय (रंजन)
हिंदी आत्मकथाओं में संरचित आत्म छवियों का सामाजिक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. बिक्रम सिंह
Th 22721

विषय सूची

1. हिन्दी साहित्य में आत्मकथा : प्रकृति, स्वरूप और निर्मिति 2. हिन्दी आत्मकथा : संरजित आत्म छवियों की विकसनशील आत्मपरकता 3. स्त्री आत्मकथाएं : स्त्री विमर्श के सरोकार और आत्म छवि का विस्तार 4. दलित आत्मकथाएं : दलित विमर्श के सरोकार, सामाजिकता और आत्म छवि का स्वरू 5. 21वीं शताब्दी की हिन्दी आत्मकथाओं का परिदृश्य। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

15. बिन्दुमती भारती
नई कविता आन्दोलन और तीसरा सप्तक।
निर्देशक : डॉ. मधु वर्मा
Th 23181

विषय सूची

1. कविता की संरचना 2. नई कविता एक परिचयात्मक अध्ययन 3. नई कविता आन्दोलन के प्रमुख कवि 4. तीसरा सप्तक। उपसंहार । संदर्भ ग्रंथ सूची।

16. मंजु रानी
मध्यकालीन काव्य-भाषा का स्वरूप और मीरा की काव्य-भाषा।
निर्देशक : डॉ. महेश कुमार
Th 22730

सारांश
(असत्यापित)

शोध ग्रंथ प्रथम अध्याय में भाषा का स्वरूप समझाते हुए काव्य भाषा से इसकी तुलना प्रस्तुत की गई है। काव्य भाषा को उसकी पहचान देने वाले तत्वों शब्द चयन एवं शब्द प्रयोग, अलंकार, छंद, संगीत, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, कल्पना, बिम्ब, प्रतीक आदि का स्वरूप और प्रकार स्पष्ट किए गए हैं। दूसरे अध्याय में भक्तिकालीन काव्य में प्रयुक्त मुख्यतः ब्रज भाषा, अवधी भाषा, मिश्रित भाषा और दक्खिनी हिन्दी के स्वरूप और प्रयोग का उल्लेख करते हुए इनसे जुड़े प्रमुख भक्ति कवियों की भाषा का भी अवलोकन किया गया है तथा मीरा की इसी काल में अलग विशिष्ट राजस्थानी भाषा का भी स्वरूप स्पष्ट किया गया है। तीसरे अध्याय में मीरा के काव्य की भाषा के व्याकरणिक पक्ष को उभारने के साथ-साथ मीरा के पदों में प्रयुक्त अन्य भाषाओं के रूपों का भी विश्लेषण किया है। इसी क्रम में मीरा की काव्य भाषा का महत्त्व भी स्थापित किया गया जिससे ज्ञात होता है कि मीरा की काव्य भाषा अन्य संतों की भाषा की भांति सहज, सरल, प्रवाहमयी और 'नीर' की भांति गतिशील है जो किसी नियम बंधन को

नहीं स्वीकारती भावों की भांति उनकी भाषा भी शक्ति सम्पन्न है जो जनमानस की भाषा होते हुए भी विशिष्ट है। चौथे अध्याय में मीरा की काव्य भाषा की सौन्दर्य का जामा पहनाने वाले तत्वों जैसे अलंकार, छंद, बिम्ब, प्रतीक आदि का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है जिससे ज्ञात होता है कि मीरा की काव्य भाषा केवल किसी शुष्क संत की भाँति नहीं अति सौन्दर्यमयी है। पाँचवें अध्याय में मीरा की काव्य भाषा पर पड़े लोक-सांस्कृतिक प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। जोकि उनके परिवेश का ही परिणाम है। मीरा के काव्य में कृत्रिमता का लेशमात्रा भी नहीं है। इसीलिए उनके काव्य में भाषा में 'लोक' के दर्शन सहज ही हो जाते हैं। अर्थात् उनकी भाषा में लोकतत्व, लोकजीवन, लोकसंस्कृति और लोकभाषा सभी कुछ मिल जाता है।

विषय सूची

1. काव्य-भाषा : अभिप्राय और स्वरूप 2. मध्यकालीन काव्य भाषा का स्वरूप 3. मीरा की काव्य भाषा 4. मीरा काव्य का भाषा सौष्ठव 5. मीरा की काव्य भाषा का सांस्कृतिक पक्ष। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

17. मधुबाला

भारतीय मध्यवर्ग का चरित्र और कमलेश्वर का कथा-साहित्य।

निर्देशिका : डॉ. तृप्ता शर्मा

Th 22714

सारांश

(असत्यापित)

कमलेश्वर एक ऐसे कथाकार है जिन्होंने आज के मधयवर्गीय समाज की सच्ची झलक जनमानस के समक्ष प्रस्तुत की है / मेरा यह शोध कार्य 'भारतीय मध्यवर्ग का चरित्र और कमलेश्वर का कथासाहित्य-' न केवल साहित्यक दृष्टि से अपितु सामाजिक व् मानवीय दृष्टि से भी अत्यंत महतवपूर्ण है। प्रस्तुत शोद्द प्रबंध को पांच अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय में ' भारतीय मध्यवर्ग का अभिप्राय एवं अवधारणा' प्रस्तुत की है । इसके अंतर्गत वर्ग की अवधारणा, मध्यवर्ग की परिभाषा एवं स्वरुप , स्वातंयोत्तर मध्यवर्गीय चेतना , भारतीय मध्यवर्ग की समस्याएं एवं बहुआयामी लेखक कमलेश्वर एक परिचय को प्रस्तुत किया गया है -। द्वितये अध्याय में 'मध्यवर्गीय चरित्र एवं पात्र परमपरा का विकास' के अंतर्गत चरित्रएक परिचय - चित्रण-, चरित्र चित्रण का स्वरुप, पात्र परम्परा - भेद एवं आवश्यकता, प्राचीन सन्दर्भ में पात्र परम्परा एवं चरित्र दृष्टि, कमलेश्वर की कहानियो एवं उपन्यासों में मध्यवर्गीय चरित्र एवं पात्र परम्परा को प्रस्तुत किया गया है। तृतीय अध्याय 'कमलेश्वर के कथासाहित्य में - विश्लेषण - मध्यवर्गीय समाज' के अंतर्गत कमलेश्वर की कहानियाँ एवं मध्यवर्गीय विविध आयाम , कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय विविध आयाम एवं कमलेश्वर के कथासाहित्य में मध्यवर्गीय कस्बाई और महानगरीय - परिवेश को प्रस्तुत करता है। चतुर्थ अध्याय में मध्यवर्गीय चरित्रविश्लेषण के अंतर्गत हिंदी- कहानी का अर्थ, स्वरुप एवं विकाश, कमलेश्वर की कहानी बोध को प्रस्तुत किया गया - कला एवं कमलेश्वर की कहानियो में समस्या - है। पंचम अध्याय ' कमलेश्वर के उपन्यास साहित्य में मध्यवर्गीय चरित्रविश्लेषण-' के अंतर्गत उपन्यास एक - संक्षिप्त परिचय, हिंदी उपन्यास और कमलेश्वर, एवं कमलेश्वर के उपन्यासों में समस्या बोध को प्रस्तुत किया - गया है। उपसंहार के अंतर्गत कमलेश्वर के कथा साहित्य में मध्यवर्गीय समाज की परिस्थितियों व् आज के - ज में प्समारासिंगकता पर संक्षिप्त विचार व् मान्यताएं प्रस्तुत की गई है।

विषय सूची

1. भारतीय मध्यवर्ग का अभिप्राय एवं अवधारणा 2. मध्यवर्गीय चरित्र एवं पात्र परम्परा का विकास 3. कमलेश्वर के कथा साहित्य में मध्यवर्गीय समाज-विश्लेषण 4. कमलेश्वर के कहानी-साहित्य में मध्यवर्गीय

चरित्र-विश्लेषण 5. कमलेश्वर के उपन्यास साहित्य में मध्यवर्गीय चरित्र-विश्लेषण। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

18. मिश्र (अवनीश)
बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन का हिन्दी उपन्यासों की भाषा एवं रूप पर प्रभाव।
निर्देशक : डॉ. कृष्णा शर्मा
Th 22718

सारांश
(असत्यापित)

शोध विषय 'बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में सामाजिकआर्थिक परिवर्तन का हिन्दी उपन्यासों की भाषा एवं रूप - पर प्रभाव' को पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहले अध्याय ''सदी के अंतिम दशक में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन'' में तीन मकारों -'मंडल', 'मंदिर' और 'मार्केट' से पुकारे जानेवाले बदलावों पर चर्चा है। दूसरे अध्याय, "उपन्यास(साहित्यिक संदर्भ-सांस्कृतिक-सामाजिक) भाषा एवं रूप का प्रश्न :" में उपन्यास की सैद्धांतिकी, विशेषतः उपन्यास की परिभाषा और उसके रूप तथा भाषा पर चर्चा है। तीसरे अध्याय, "हिन्दी उपन्यासों नब्बे के) में भाषा एवं रूप का प्रश्न (दशक के पूर्व" में संक्षेप में नब्बे के दशक से पहले के प्रमुख हिन्दी उपन्यासों की भाषा एवं रूप के संदर्भ में परिवर्तनों को चर्चा है। चौथे अध्याय, "1990 के बाद के हिन्दी उपन्यासका भाषा एवं रूप : प्रश्न" में नब्बे के दशक और उसके बाद के उपन्यासों के संदर्भ में भाषा एवं रूप में परिवर्तनों का सर्वेक्षण है। पांचवें अध्याय, 'विशेष संदर्भप्रतिनिधि उपन्यासों का सर्वेक्षण :' में 12 प्रतिनिधि उपन्यासों का विशेष अध्ययन किया गया है। अध्ययन के अंत में निष्कर्षों को इस तरह रख सकते हैंइस युग के कई उपन्यासों में सुगठित रूप की : जगह विखंडित रूप दिखता है। इस आधार पर इन उपन्यासों को पोस्ट नावेल कहा जा सकता है। उपन्यासों में विधाओं का संलयन दिखाई देता है। कथा में आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, डायरी, अखबारी रिपोर्टिंग, नोटिंग्स आदि दूसरी विधाओं का समावेश होता है। कथा के साथ इतिहास, रिपोर्ट जैसे अनुशासन भी मिलते दिखते हैं। उपन्यासों को शीर्षकों में ढाल कर अध्यायों में बांटा गया है, जिसे एपिसोडीकरण की प्रवृत्ति कह सकते हैं। उपन्यासों की भाषा में बदलती राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन की नयी भाषा का असर दीखता है। भूमंडलीकरण के प्रभाव से अंग्रेजी शब्दों, पदों और वाक्यों और वाक्य संरचना का प्रयोग, विज्ञापनों, सूचनाकंप्यूटर -संचार क्रांति-, इंटरनेट के कारण नयी भाषा का प्रभाव भी दिखता है।

विषय सूची

1. सदी के अंतिम दशक में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन 2. उपन्यास : भाषा एवं रूप का प्रश्न (सामाजिक-सांस्कृतिक-साहित्यक संदर्भ) 3. हिन्दी उपन्यासों (नब्बे के दशक के पूर्व) में भाषा एवं रूप का प्रश्न 4. 1990 के बाद के हिन्दी उपन्यास : भाषा एवं रूप का प्रश्न 5. विशेष संदर्भ : प्रतिनिधि उपन्यासों का सर्वेक्षण 6. उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

19. मीणा (जीतेन्द्र कुमार)
प्रसाद और मोहन राकेश के नाटकों में नारी-अस्मिता का प्रश्न।
निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता
Th 22711

सारांश
(असत्यापित)

वर्तमान समय में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि में हाशिए के प्रश्नों को केन्द्रीय विषय बनाया गया है। प्रस्तुत शोध में नारी अस्मिता के अंतर्गत स्त्री मुक्ति से संबन्धित सभी जटिल प्रश्नों का समाधान खोजने का प्रयास किया गया है। 'नारी अस्मिता परिभाषा और स्वरूप :' शीर्षक में अस्मिता शब्द का अर्थ और स्वरूप समझने के साथ नारी अस्मिता को स्पष्ट किया है। अर्चना वर्मा के शब्दों में "'अस्मि' अर्थात 'मैं हूँ'। अस्मि की भाववाचक संज्ञा 'अस्मिता' है यह 'स्वत्व' का बोध है, आत्मनिर्णय और आत्माभिव्यक्ति का प्रश्न है जो किसी को व्यक्ति बनाता है। यानि ...जो हम 'नहीं' हैं का एकत्र बोध अस्मिता की रचना करता है। "'प्रसाद के नाटकों में नारी अस्मिता' शीर्षक के तहत प्रसाद के नाटकों में नारी अस्मिता और उसकी पहचान के प्रश्नों को स्प्सहट किया है। राज्यश्री, मल्लिका, सरमा, देवसेना, ध्रुवस्वामिनी आदि पात्र कहींकहीं-न- पितृसत्ता द्वारा निर्मित स्त्री छवि को तोड़ते हैं। 'मोहन राकेश का नाट्य साहित्य और नारी चिंतन' शीर्षक पर भी काम किया गया है। राकेश ने स्त्री सम्बन्धों को अपनी मौलिक रंगदृष्टि द्वारा एक नया बोध प्रदान किया। स्त्री को नितांत वैयक्तिक स्तर पर आंतरिक चिंतनमनन- द्वारा अपनी अस्मिता तथा अस्तित्व की निरंतर खोज करवाते चलते हैं। 'प्रसाद और मोहन रकजेश की एकांकियों में नारी चेतना' शीर्षक पर स्त्री चेतना की दृष्टि से अध्ययन किया है। 'नारी अस्मिता सामयिक : चिंतन-रंग' विषय पर प्रसाद और मोहन राकेश के नाटकों को केंद्र में रखकर प्रेम, संवेदना और विवाह के मूलभूत प्रश्नों को अभिव्यक्त किया है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी स्वतन्त्रता का निर्धारन करने का हक है, अतः स्त्री को भी जबरन लादी गई परम्पराओं, नैतिकताओं, मर्यादाओं, कुरुतियों, धर्माधताओं को त्यागकर अपने अस्तित्व निर्माण की प्रक्रिया में स्वयं सक्रिय होना चाहिए।

विषय सूची

1. नारी-अस्मिता : परिभाषा और स्वरूप 2. प्रसाद के नाटकों में नारी-अस्मिता 3. मोहन राकेश का नाट्य साहित्य और नारी चिंतन 4. प्रसाद और मोहन राकेश की एकांकियों में नारी चेतना 5. नारी-अस्मिता : सामयिक रंग चिंतन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

20. मीना (राकेश कुमार)
उत्तर-औपनिवेशिक विमर्शों के संदर्भ में गार्सां द तासी, जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन, एफ.ई.के. के मध्यकालीन चिंतन का पुनर्मूल्यांकन।
निर्देशक : डॉ. मुकेश गर्ग
Th 22712

सारांश
(सत्यापित)

भारतीय भाषा और संस्कृति के इतिहास की दृष्टि से सभी समाजशास्त्रियों, इतिहासकारों एवं राजनीतिज्ञों ने मध्यकालीन कालखंड को महत्वपूर्ण माना है। साहित्य, इतिहास और आलोचना के मूल्यवान प्रतिमान यहीं से निकले, यहीं से निर्मित हुए। साहित्येतिहास लेखन की परंपरा में तासी, ग्रियर्सन एवं एफके यहाँ मध्यकालीन चिंतन .के.ई. महत्वपू एवं साहित्य उत्कृष्ट स्थान रखते हैं। आज भी ये महत्वपूर्ण हैं। यह सवाल भी आजर्ण है कि पाँचछह सौ - वर्ष पुराने काव्य को कैसे पढ़ा जाय। यह जानना जरूरी है कि पूर्ववर्ती विमर्शकारों ने इसे किस रूप में पढ़ा? अध्ययन, विवेचन, विश्लेषण की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोधऔपनिवेशिक विमर्शों के संदर्भ में गार्सां द -उत्तर" प्रबंध- तासी,ग्रियर्सन एफ.ई को छह अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय "के चिंतन का पुनर्मूल्यांकन .के. 'मध्यकालीन चिंतन और साम्राज्य वाद व उपनिवेशवाद' में मध्यकालीन स्वरूप और अवधारणा पर विचार किया गया

है। द्वितीय अध्याय 'उत्तरऔपनिवेशिक विमर्शों की विभिन्न सरणियाँ-' के तहत उत्तरऔपनिवेशिक की परिभाषा-, स्वरूप, अभिप्राय और अवधारणा पर विचार किया गया है। तृतीय अध्याय 'गार्सां द तासी, जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन, एफके इतिहासों में मध्यकालीन इतिहास लेखन एवं मध्यकालीन कवियों के संदर्भ में चिंतन .के.ई.' के तहत गार्सां द तासी के हिंदी साहित्य के इतिहास लेखन को परखा गया है। चतुर्थ अध्याय 'जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन' में साहित्येतिहासलेखन की अवधारणा और दृष्टियों तथा भक्तिकाव्य के विशिष्ट कवियों के संदर्भ में उनके मूल्यांकन - का अध्ययन किया गया है। पंचम अध्याय'एफका चिंतन .के.ई.' के तहत इतिहास लेखन एवं कवियों के संदर्भ में उनकी दृष्टि का अध्ययन किया गया है। षष्टम् अध्याय 'उत्तरऔपनिवेशिक संदर्भों में साहित्येतिहासकारों की - अवधारणा का पुनर्मूल्यांकन' के तहत साहित्येतिहासगया है। लेखन की अवधारणा और दृष्टियों का मूल्यांकन किया-

विषय सूची

1. मध्यकालीन चिन्तन और साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद 2. उत्तर-औपनिवेशिक विमर्शों की विभिन्न सरणियाँ 3. गार्सां द तासी का चिंतन 4. जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन का चिंतन 5. एफ.ई.के. का चिंतन 6. उत्तर-औपनिवेशिक संदर्भों में साहित्येतिहासकारों की अवधारणा का पुनर्मूल्यांकन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

21. यादव (अनिल कुमार)
नयी कहानी आंदोलन में कमलेश्वर का योगदान।
निर्देशिका : डॉ. कुमुद शर्मा
Th 23104

सारांश
(असत्यापित)

नयी कहानी आंदोलन के आलोचना और विवाद में एक मिथ की तरह कमलेश्वर नयी कहानी के चिंतन में लगातार मौजूद रहे| नयी कहानी आंदोलन में कमलेश्वर का लिखा हुआ लगातार विवादग्रस्त रहा लेकिन 'नयी कहानी' विचारधारात्मक एवं आलोचानात्मक अस्त्र मुहैया करने वालों में कमलेश्वर सबसे आगे नज़र आते है| वे केवल कहानीकार के रूप में ही नहीं बल्कि इस दौरान आने वाली 'नयी कहानी' एवं 'समांतर कहानी' जैसे आंदोलन के नियामक एवं संचालक भी रहे| 'नयी कहानी' उनके लिए आंदोलन नहीं, नए के लिए प्रयत्नशील और प्रयोगशील रहने की प्रक्रिया है| कमलेश्वर पुरानेपन के हर उन मूल्यों की आलोचना करते है, जो नयेपन और मनुष्यता के आड़े आती है| नयी कहानी के अलावां 'कथा संस्कृति' और 'कथा वृति' के माध्यम से कथा की दीर्घ विकास यात्रा वैभव,भावभूमि एंव सरंचना को भी रेखांकित किया-| उनसे असहमत हुआ जा सकता है किंतु नयी कहानी और कहानी की पहचान बनाने की उनकी ललक को दरकिनार नहीं किया जा सकता| कमलेश्वर की कहानियों में परम्परा से विद्रोह और अनुभव क्षेत्र की प्रामाणिक पहचान दिखाई पड़ती है| वे 'नयी कहानी' के सबसे गतिशील कहानीकार हैं, जिनकी कहानियां परिवेश और समय की आकांक्षाओं के साथ बदलती रही है| प्राम्भिक दौर की कहानियां कस्बाई जीवन से संबंधित हैं वहीं बाद की कहानियों में महानगरीय जीवन| इनकी कहानियों में आमआदमी और निम्न मध्यवर्ग केंद्र में है| कमलेश्वर की कहानियां यथार्थवादी हैं लेकिन यथार्थवाद का खुरदरापन उनमें नहीं मिलता है| शुरुआती दौर की कहानियों में आदर्श और भावुकता का पुट मिलता है| 'समांतर कहानी' के माध्यम से उन्होनें 'अकहानी', 'सहज कहानी', 'विक्षुब्ध कहानी', 'श्मशानी पीढ़ी' के चलते जो आम आदमी कहानी से गायब हो गया था, उसे पुनकहानी में स्थापित किया :| उन्होंने हिंदी कहानी को एक नयी दिशा दी और उसके तेवर को बदल कर रख दिया| हिंदी साहित्य में कमलेश्वर जैसे बहुमुखी और रचनात्मक व्यक्तित्व के लोग कम ही हुए|

विषय सूची

1. नयी कहानी आंदोलन का संदर्भ 2. नयी कहानी आंदोलन के प्रमुख विवाद 3. नयी कहानी आंदोलन और कमलेश्वर की आलोचना 4. नयी कहानी आंदोलन और कमलेश्वर कर रचना कर्म 5. कहानीकार कमलेश्वर : भाषा तथा शिल्प 6. समांतर कहानी की जरूरत क्यों? उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

22. यादव (आलोक रंजन सिंह)
मार्कण्डेय के कथा साहित्य में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना।
निर्देशक : प्रो. निरंजन कुमार
Th 22725

सारांश
(असत्यापित)

मार्कण्डेय के रचनासंसार के बारे में कोई भी बातचीत उस पूरे साहित्यिक और समाजार्थिक परिदृश्य को भुलाकर - बार यह परिदृश्य लौटता है। कई बार परिदृश्य -प्रबंध में गौर करेंगे कि बार-संभव न था। इसलिए आप मेरे पूरे शोध बिन्दु से-के दृष्टिमार्कण्डेय को देखा गया है और जगहसंसार में आलोचित समाज को -जगह मार्कण्डेय के रचना- समाज की आलोचना करते हैं। वे उसे ज्यों का त्यों रचने -समझने का प्रयास किया गया है। मार्कण्डेय अपने समय कार्य के दौरान मैंने-वाली प्रकृतिवादी दृष्टि के हिमायती नहीं हैं। अपने शोध पाया है कि ग्रामकथा -कथा और नगर- संसार को जिस सरलीकृत ढंग से नव रुमानवाद के मुहावरे से जोड़ दिया जाता है-में बाँटते हुए मार्कण्डेय के कथा, वह सही नहीं है। मार्कण्डेय के कथासंसार का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन इस तरह के सरलीकरण को गलत सिद्ध - करता है। इनके कहानियोंऔर उपन्यासों में स्वातंत्रयोत्तर भारत के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक बदलावों और तज्जनित भाव संबंधों में आ रहे बदलावों और मूल्यगत विघटन को ये कथा बहुत सर्जनात्मक ढंग से रचती है। - जिसे मूल धारा की कथा या नयी कहानी कहा गया था, वो रचनाकारों के आत्मबद्धता का उदाहरण है। वे कथाकार जिस शहरी मध्यवर्गीय जीवन की कहानियाँ रच रहे थे, वह उस समय का बहुत छोटा हिस्सा था। आज भी उत्तर भारत में साठ प्रतिशत से ज्यादा जनता गाँवों में रहती है। उस दौर में यह प्रतिशत इससे कहीं ज्यादा था और मार्कण्डेय जैसे कथाकार समाज के इसी बहुलांश से जुड़े थे और उसकी विडम्बनाओं को रच रहे थे। अगर मार्कण्डेय के पूरे रचना संसार को देखें तो उसमें वैचारिक परिवर्तन और संवेदनात्मक गहराई दोनों एक साथ विकसित होता हुआ दिखता है। उनकी पहली कहानी 'गुलरा के बाबा' और अंतिम कहानी संग्रह -'हलयोग' के बीच इस विकास को देखा जा सकता है। इसे गांधीवाद, माक्र्सवाद और अम्बेडकरवाद के क्रम में समझ सकते हैं।

विषय सूची

1. मार्कण्डेय का रचनात्मक जीवन और साहित्य : एक संक्षिप्त परिचय 2. मार्कण्डेय का कथा-साहित्य, वैचारिक चिंतन और राजनीति 3. मार्कण्डेय का कथा-साहित्य और सामाजिक संरचना 4. मार्कण्डेय के कथा-साहित्य का संरचनातमक पक्ष 5. मार्कण्डेय की भाषा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

23. यादव (ओम प्रकाश)
छायावाद संबंधी आलोचनात्मक विवादों का अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. राजेन्द्र गौतम
Th 22709

विषय सूची

1. छायावादी काव्यान्दोलन 2. छायावाद संबंधी विभिन्न वाद-विवाद 3. छायावाद : विषयवस्तु एवं काव्य-शिल्प संबंधी वाद-विवाद 4. छायावाद के संबंध में प्रमुख छायावादी कवियों की स्थापनाएं 5. छायावाद : प्रतिष्ठित आन्दोलन के रूप में इसकी आलोचना 6. छायावाद संबंधी वाद-विवाद और परवर्ती आलोचना। उपसंहार। ग्रंथ सूची।

24. यादव (चन्द्रप्रकाश)
आलोचना की मार्क्सवादी दृष्टि और मुक्तिबोध का आलोचना कर्म।
निर्देशक : डॉ.आशुतोष कुमार
Th 22710

विषय सूची

1. आलोचना की मकर्सवादी दृष्टि- सिद्धांत और व्याख्याएँ 2. रचना-प्रक्रिया और मुक्तिबोध 3. आलोचना की समस्याएँ और मुक्तिबोध 4. मुक्तिबोध की व्यावहारिक समीक्षा 5. मुक्तिबोध और समकालीन हिन्दी आलोचना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

25. राम जी लाल
हिन्दी भक्ति साहित्य में अस्मितामूलक चेतना।
निर्देशक : डॉ. विनोद तिवारी
Th 22717

विषय सूची

1. अस्मिता : अवधारणा एवं विचार 2. अस्मिता की राजनीति और साहित्य 3. हिन्दी भक्ति साहित्य में दलित अस्मिता 4. हिन्दी भक्ति साहित्य में स्त्री अस्मिता 5. हिन्दी भक्ति साहित्य में जातीय चेतना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

26. रीता
बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के उपन्यासों में सत्ता-विमर्श (1975-2000 तक के उपन्यास)।
निर्देशक : डॉ. हरीश खन्ना
Th 22726

सारांश
(असत्यापित)

सत्ता जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है और उपन्यास जीवन को संपूर्णता में अभिव्यक्त करते हैं। 1975 से 2000 तक का काल विभिन्न बदलावों का समय रहा है। 1975 में देश में आपातकाल की घोषणा, आठवें दशक में अस्मितामूलक विमर्श जैसेस्त्री विमर्श -, दलित विमर्श जो सत्ता में अपनी दावेदारी प्रस्तुत करते हैं और नब्बे के दशक में भूमंडलीकरण के रूप में सत्ता विमर्श का नया रूप। मैंने इस शोध प्रबंध में इन सब बिन्दुओं के आलोक में उपन्यासों के माध्यम से सत्ता के विभिन्न रूपों सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक को विस्तार से समझने और विश्लेषित करने का प्रयास किया है। उपन्यासकार बहुत से प्रश्नों तथा चुनौतियों से एक साथ जूझने लगे। फलतः कथानक चयन से लेकर अभिव्यक्ति शैली तक में नया बदलाव दिखाई देता है। सत्ताधारी वर्ग,

जातिसत्ता, पितृसत्ता तथा भूमंडलीकरण के रूप में छद्म आधुनिकता दिखाता पश्चिमी गुलामी का नया रूपसब - अपने राम-कुछ इस अवधि के उपन्यासों में रेखांकित किया गया है। अपने, अर्द्धनारीश्वर, आवां, एक जमीन अपनी, कटरा बी आर्जू, कलिवाया बाइपास : कथा-, कितने पाकिस्तान, चाक, छप्पर, परिशिष्ट आदि उपन्यासों में स्त्री व दलित अस्मिता बोध का, उसकी संघर्षशील प्रवृत्ति का चित्रण करना इस अवधि के उपन्यासों की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। स्त्रियों व दलितों को पहले अपने समाज में व्याप्त भेदभावों, अंतर्विरोधों से ऊपर उठना होगा तभी वे सशक्त तरीके से सत्ता में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर पाएंगे। भूमंडलीकरण के रूप में सत्ता के नए विमर्श अर्थात पश्चिम के सांस्कृतिक वर्चस्व से सावधान होने की अति आवश्यकता है अन्यथा अपनी जड़ों से उखड़कर हम कहीं के नहीं रहेंगे। सत्ता सर्वदा त्याज्य नहीं होती। मनुष्य की समाजीकरण की प्रक्रिया सत्ता के अभाव में संदिग्ध हो सकती है। परिवार, धर्म, अर्थतन्त्र, पारंपरिक मान्यताएँ और संगठन हमें शक्ति प्रदान करते हैं लेकिन इनका परिशोधन निरंतर चलते रहना आवश्यक है ताकि सत्ता निरंकुश न हो सके।

विषय सूची

1. सत्ता का स्वरूप और संरचना 2. वर्ग केंद्रित सत्ता-विमर्श के उपन्यास 3. सत्री अस्मिता केंद्रित सत्ता-विमर्श के उपन्यास 4. वर्ण/जाति केंद्रित सत्ता-विमर्श के उपन्यास 5. उपन्यासें में सत्ता-विमर्श का बदलता स्वरूप। उपसंहार। आधार ग्रंथ सूची।

27. वर्मा (राखी)
वर्तमान संदर्भ में हिन्दी सूफी-काव्य का अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. विजयशंकर मिश्र
Th 22708

सारांश
(असत्यापित)

Vartmaan sandarbho mei hindi sufi Kavya ki praasangikta swayamsidh hai. Sthitiyo ko yathasambhav sudhaarne mei sufi vichaar kaargaar sidh ho skte hai. Prem ko kasauti maankar samaajik vyavasthaao mei nirmaan ka shankhnaad hindi sufi Kavya ne kiya. Madhyakaalin samajeek saanskratik jeevan m anek kuritiyo tatha baahya aadambar dekhte h. Saamantvaadi vyavastha aur jaativaad varn vyavastha ki kuruptaae samajo ko samvedna shunya bna rhe the. Naari ki sthiti hmesha ki tarah shochniye thi. Aise m Santo tatha sufiyo ne apne samataparak maanviye vichaaro ko janta tak pahuchaya. Inka sakaaratmak prabhaav bdi pda. Aaj ke smay mei bhi samaaj ka vahi kinchit badle rupo mei anubhutiheen rup dekha ja rha h. Aadhunik yug vigyaan ka yug hai kintu maanviye soch aaj bhi rudhivaadi vichaaro se bandhi hui hai. Varg varn bhed, stri ki visham avastha, daridrata aaj bhi bahut kuchh vaisi hi hai. Samaajik kuritiya baahya aadambar kam nahi hue hai. Itne smay baad bhi samaaj ki dasha aaj utni nahi badli hai jitni badalni chaahiye thi. Sufi kavyo mei vyakt vichaar ek baar fir se maanav jeevan ke sahi arth samajhne mei sahaayak ho sakte hai. Sufi Santo ne udaarta k saath manushya ke prati gahri samvedna, ujjaval prem bhaavna, dhaarmik ekta, saanskratik sauhardra ke prati purn pratibadhta dikhlaai. Unhone jeevan ko udaatt bnaane ka sandesh diya.

विषय सूची

1. सूफी काव्य की पृष्ठभूमि 2. हिन्दी सूफी काव्य में ऐतिहासिक मनुष्य की अवधारणा 3. हिन्दी सूफी काव्य : परम्परा और बदलावों की टकराहट के स्वर 4. हिन्दी सूफी काव्य परम्परा में उत्सवात्मक लोक संस्कृति 5. हिन्दी सूफी-काव्य में सामाजिक सरोकार। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

28. विनय कुमार
नेमिचंद्र जैन : एक सांस्कृतिक व्यक्तित्व का निर्माण।
निर्देशक : प्रो. अपूर्वानंद
Th 22729

सारांश
(असत्यापित)

नेमिजी के सांस्कृतिक व्यक्तित्व के गठन में कविता,आलोचना,नाट्यकर्म,सम्पादन,शिक्षण,स्तम्भ लेखन,अनुवाद ,आंदोलन से लेकर आयोजन तक सभी अपना योग देते हैं। उन्होने संस्कृति को परिभाषित करते हुए ठीक कहा है कि "संस्कृति किसी भी समाज का आंतरिक गुण व सृजनात्मक व्यवहार होता है और उसका सर्वाधिक प्रकाशन कला और साहित्य में होता है। "नेमिजी का पूरा संस्कृतिकर्म उनके ले-खन में ही प्रकाशित हुआ है। हम देखते हैं कि नेमिजी के सांस्कृतिक व्यक्तित्व के निर्माण में जितना योग उनके कविसमीक्षक रूप -व्यक्तित्व और उपन्यास- का है,उतना ही योगदान उनके नाट्यचिंतन उनके व्यक्तित्व को पूर्ण बनाता -चिंतक रूप का है। संगठन व संस्कृति- है। उनकी मित्र मंडली उनके व्यक्तित्व को माँजती और सँवारती है। इस तरह समग्रता में हम जिस नेमिजी के - व्यक्तित्व को हासिल कर पाते हैं,वैसा बहुमुखी व आयोजनधर्मी व्यक्तित्व हमें हिन्दी में कोई दूसरा दिखलाई नहीं पड़ता।

विषय सूची

1. कवि-वयक्तित्व 2. रंगमंचीय व्यक्तित्व 3. औपन्यासिक समीक्षा 4. राजनीति व साहित्यिक मित्रता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

29. शर्मा (प्रीतम सिंह)
समकालीन हिन्दी नाटकों की रंगभाषा।
निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता मलिक
Th 23102

सारांश
(असत्यापित)

"शोध सांरांश" मैंने अपने शोध प्रबन्ध को उपसंहार के अतिरिक्त चार अध्यायों में विभाजित किया है। प्रथम अध्याय -'हिन्दी नाट्य सृजन की नवीन परिस्थितियाँ और समकालीनता की अवधारणा' में प्रयास रहा है कि हिन्दी नाट्य परम्परा, उसके प्रमुख पड़ावों, नाट्य साहित्य में व्याप्त परिवर्तनशील एवं विकासशील तत्वों यथाभाषा-नाट्य-, रंगभाव-, रंगबुद्धि, रंगपरिकल्पना-, रंगसामग्री आदि का संक्षिप्त आकलन किया जाए शोध प्रबन्ध -सज्जा एवं रंग- के द्वितीय अध्याय'प्रयोगधर्मी नाटककार एवं उनकी रचना प्रक्रिया' में समकालीन भारतीय नाट्य जगत् के कुछ चयनित नाटकों का विवेचन इस आशय से किया गया है किविवेच्य युग के पुरोधा नाटककारों की प्रतिनिधि - रचनाओं ने किस प्रकार समकालीन हिन्दी नाटकों की रंग भाषा को आकार प्रदान किया है। तृतीय अध्याय 'समकालीन नाटकों की रंगभाषा' के अन्तर्गत रंग तथा भाषा के सापेक्षिक संबंध को स्पष्ट करते हुए यह समझने का प्रयास रहा है कि किस प्रकार ये दो शब्द समकालीन हिन्दी नाटक के पर्याय और परिचायक बन गये। शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय -'रंगभाषा के तत्व' के अन्तर्गत समकालीन हिन्दी नाटकों की रंग भाषा का तात्त्विक विश्लेषण किया गया अन्त में अपना शोध प्रबन्ध इस आशय से प्रस्तुत कर रहा हूँ कि आने वाली शोधार्थी पीढ़ी को समकालीन हिन्दी नाटकों के प्रति न केवल आकर्षित करेगा अपितु उन्हें इस अथाह सागर से कुछ बहुमूल्य

मोती चुनने की प्रेरणा भी देगा। हम सब 'पिरान्देलो' के इस कथन का मर्म समझ पायेंगे कि -"हमारे शब्द न कठिन हैं न आसान वे तो बस ऐसे है जिनका उपयोग अनिवार्य है, जिनके अतिरिक्त कोई अन्य शब्द उस स्थिति में उस भाव को व्यक्त नहीं कर सकता।

विषय सूची

1. हिन्दी नाट्यसृजन की नवीन परिस्थितियाँ और समकालीनता की अवधारणा 2. प्रयोगधर्मी नाटककार एवं उनकी रचना प्रक्रिया 3. समकालीन हिन्दी नाटकों की रंगभाषा 4. रंगभाषा के तत्त्व। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

30. शुक्ल (आशुतोष)
भाषा में लैंगिकता : स्वातंत्र्योत्तर यथार्थवादी नाटकों के संदर्भ में ।
निर्देशक : डॉ. टेकचंद
Th 23101

सारांश
(असत्यापित)

भाषा में लैंगिकताः स्वातंत्रयोत्तर यथार्थवादी नाटकों के संदर्भ में आकर्षण भाषा का अनिवार्य लक्षण है। भाषा ही वह सेतु है जो लोगों को एक-दूसरे से जोड़ती है, हमारे भावों और विचारों को आकार देती है एवं पहचान को गढ़ती है। एक ओर जहाँ भाषा में लोगों की आशा, आकांक्षा एवं सपने अभिव्यक्त होते हैं, वहीं दूसरी ओर अधूरे संघर्ष, घुटती जिन्दगी एवं टूटते संकल्प भी दिखाई देते हैं। भाषा वर्चस्व के व्याकरण को भी उजागर करती है। विश्व की तमाम अन्य भाषाओं के समान ही हिन्दी भाषा में भी पुरुष का ही बोलबाला रहा है। जिस तरह पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्राी हाशिए पर रही है, उसी प्रकार भाषा में भी यह भेदभाव का शिकार हुई है। यह लैंगिक पक्षपात भाषा के व्याकरणिक ढाँचे से लेकर उसके प्रयोजनमूलक रूप तक देखा जा सकता है। स्त्राी को व्यक्त करने वाले नकारात्मक शब्दों में उसे उपकरणमूलक सन्दर्भों में व्यक्त किया गया है या उपभोगमूलक सन्दर्भों में। कुल मिलाकर भाषा में स्त्राी के प्रति यह भेदभाव कई स्तरों पर दिखाई देता है जिसे साहित्य की विभिन्न विधओं में देखा जा सकता है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में स्वातंत्रयोत्तर यथार्थवादी नाटकों की भाषा में इस लैंगिक पक्षपात का विवेचन-विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा में लैंगिक पक्षपात उसके संरचनात्मक एवं प्रयोजनमूलक दोनों ही रूपों में दिखाई पड़ता है। हिन्दी भाषा में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण से लेकर मुहावरे, लोकोक्ति, लोकगीतों एवं शब्द-निर्माण से लेकर अभिव्यक्ति के विभिन्न स्वरूपों में सर्वत्रा लैंगिक पक्षपात विद्यमान है। पितृसत्तात्मकता एवं उपभोक्तावादी संस्कृति दोनों ही हिन्दी भाषा में लैंगिक भेदभाव के लिए उत्तरदायी हैं। समान भाषिक धरातल के निर्माण के लिए स्त्री-भाषा अर्थात् स्त्री के संसार के अनुभवों को व्यक्त करने वाली भाषा के निर्माण के साथ-साथ समाज की सोच में सकारात्मक परिवर्तन अपरिहार्य हैं।

विषय सूची

1. लैंगिकता की अवधारणा : समाज की संश्लिष्टता एवं लिंगभेद की विशिष्टता 2. भाषा और लैंगिकता का अंतःसम्बन्ध 3. हिन्दी भाषा में लैंगिकता का स्वरूप 4. यथार्थवाद और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक 5. यथार्थवादी नाटक और हिन्दी भाषा की संरचना में लैंगिकता 6. यथार्थवादी नाटक और हिन्दी भाषा के प्रयोगगत सन्दर्भ में लैंगिकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

31. साह (मुन्ना)
तुलसी और सूर की समाज चेतना का तुलनात्मक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. मंजुला मोहन
Th 22724

सारांश
(असत्यापित)

सुविधा की दृष्टि से इसे पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहला अध्याय 'समाज चेतना अभिप्राय -' है। इसमें समाज चेतना, समाज दर्शन, समाज दृष्टि की अवधारणाओं को स्पष्ट किया गया है। देश और काल को समाज चेतना का प्रमुख कारक माना गया है। 'अधिकार', 'स्वतंत्रता', 'बंधुत्व' के साथसाथ धर्म-, संस्कृति और साहित्य का वर्णन किया गया है। दूसरा अध्याय 'तुलसी और सूर के काव्य में चित्रित सामाजिक संरचना का स्वरूप' है। इसमें वर्णाश्रम व्यवस्था, सामाजिक संबंध तथा नारी चेतना का विश्लेषण कर समानता और विषमता को दिखाने का प्रयास किया गया है। तुलसी पारंपरिक वर्णाश्रम व्यवस्था को स्वीकार करते हैं किन्तु सूर आख्यानक प्रसंगों के माध्यम से चित्रण मात्र करते हैं। तुलसी की नारी सीता के माध्यम से आदर्श रूप में प्रकट होती है और शूर्पणखा के रूप में कामिनी रूप में। सूर अदर्शता के बजाय स्वतन्त्रता को ज्यादा महत्त्व देते हैं। सामाजिक संबंध दोनों कवियों के काव्य में दिखाई देता है। तीसरा अध्याय 'तुलसी और सूर के काव्य में धर्म सम्प्रदाय और भक्ति' के अंतर्गत उनके काव्य में ब्रह्म के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों का वर्णन है, किन्तु वे सगुण रूप के उपासक हैं - तुलसी राम और सूर कृष्ण रूप के। तुलसी का भक्ति दर्शन'विशिष्टाद्वैतवाद' के सिद्धांत का प्रतिपादक है तथा सूर का भक्ति दर्शन 'शुद्धाद्वैतवाद' के सिद्धांत का। अध्याय चार का शीर्षक है 'तुलसी और सूर के काव्य में राज्य और व्यवस्था का स्वरूप'। इसके अंतर्गत उनकी युगीन जीवन स्थितियाँ, राज्य का दायित्व और सामाजिक आदर्श- अधिकार, स्वतंत्रता, बंधुत्व, मर्यादा और आचरण का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है। 'तुलसी और सूर के जीवन आदर्श' नामक पांचवे अध्याय में उनकी भक्ति और पुरुषार्थ चतुष्टय का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

विषय सूची

1. समाज-चेतना : अभिप्राय 2. तुलसी और सूर के काव्य में चित्रित सामाजिक संरचना का स्वरूप 3. तुलसी और सूर के काव्य में धर्म सम्प्रदाय और भक्ति 4. तुलसी और सूर के काव्य में राज्य और व्यवस्था का स्वरूप 5. तुलसी और सूर के जीवन आदर्श। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

32. सिंह (अतुल)
नई कहानी विषयक आलोचनात्मक प्रतिमानों का अध्ययन ।
निर्देशक : डॉ. बली सिंह
Th 22719

सारांश
(असत्यापित)

Nayee kahani vishyak pricharcha me mukhya vimarsh yatharthvad aur adhuniktavad ka raha. Jisko ajadee ke bad ki bharat ki sanskritik paristhitiyon ne prabhavit kiya. Jo alochnatmak pratiman aur mudde vimarsh ka hissa bante hai usme yatharth, yathatrth ke antargar naye yatharth ka agrah, anubhuti ki pramanikta, bhoga hua yathart, parivesh, vargeey smbandh, stree-purush sambandh, vyakti svatantray ki anubhuti, adhuniktavadi mulyon ke roop me- mulyaheenta, ajnabeeyat, mrityubodh, santras, oob tatha astitvvadi jeevan darshan, grameen yatharth banam shahree yatharth, bharteeyta aur jateeyta ka saval, parampra ka sveekar aur asveekar, nayee kahanee banam nayee kavita, parampara, prayog athava pragati aadi pramukh hai. Adhuniktavadi kal mulyon ka agrah nayee kahani ke shilp ko bhi prabhavit karta hai. Kahaneepan kahani ka vishisht katha muly hai jiski avhelna nayee kahani me katipay alochkon aur kahaneekaron dvara hoti hai. Nayee kahani ke paricharcha me sakaratmak yah raha ki kathanak ki prachalit shashtreey avdharna khandit hoti hai aur yatharth sammukh kathanak manak ka vikash hota hai. Iske atirikt kahani charcha me kahani ki bhasha, prateek, bimb aur sanketikta jaise vishyon ko bhi sthan milta hai.

विषय सूची

1. कहानी विषयक आलोचनात्मक प्रतिमान 2. कहानी विषयक आलोचनात्मक प्रतिमानों में बदलाव एवं नई कहानी 3. नई कहानी की अन्तर्वस्तु विषयक आलोचनात्मक प्रतिमान 4. नइ कहानी का शिल्प-विधान और आलोचनात्मक प्रतिमान 5. नई कहानी विषयक आलोचनात्मक प्रतिमानों का मूल्यांकन एवं प्रासंगिकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ।

33. सिंह (अनुपम)
सिद्ध-नाथ साहित्य और संत साहित्य का अतंस्संबंध।
निर्देशक : डॉ. विनोद कुमार गुप्ता
Th 23106

सारांश
(असत्यापित)

सिद्ध साहित्य हिंदी साहित्य का प्रस्थान बिंदु है सिद्ध साहित्य का भाषा एवं विचार दोनों दृष्टि से हिंदी साहित्य . भाषा की दृष्टि से सिद्ध साहित्य . के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है'मध्यकालीन आर्यभाषा" की अंतिम कड़ी अपभ्रंश भाषा में लिखा गया है ये सिद्ध .श भाषा से हिंदी भाषा के लक्षण खोजे जा सकते हैंतथा इसी अपभ्रं . बौद्धों की महायान शाखा से सम्बंधित थे,जिनकी संख्या चौरासी मानी गयी है सिद्धों में प्रमुख कवि सरहपा थे . . इन्होने ही सहजयान का विकास किया है. सिद्धों के जीवन का मूल दर्शन 'सहजसाधना' है किसी वे जीवन को . वे न. बह्याडम्बर में जीने के विरोधी थे'भव' को मानते थे न ही 'निर्वाण' को उनके लिए.'भव' और 'निर्वाण' दोनों 'चित्त' की अवस्था है परन्तु बाद में गोरख . नाथपंथ का मूल भी सिद्धों की यही परम्परा है.नाथ ने स्वयं को अलग कर नाथपंथ को स्थापित किया में नाथपंथ सिद्धों से संतों तक की यात्रा को विश्लेषित करने यह. नाथपंथ की मूल साधना.महत्वपूर्ण कड़ी है'योग साधना' है जिसका मूल शील सिद्धों . संयम और शुद्धतावादी है- के समान नाथों ने भी तांत्रिक उच्छिृंखलताओं का विरोध कर साधु और गृहस्थ दोनों की कुरीतियों पर निर्मम हथौड़े से चोट किया यद्यपि कबीर आदि . आगे चलकर कबीर आदि का निर्गुण पंथ भी इसी मार्ग पर आगे बढ़ा. संतों पर अन्य दर्शनों का भी प्रभाव देखने को मिलता है,परन्तु अनेक बिन्दुओं पर वे सिद्धों और नाथों की ही परंपरा में दिखाई देते हैं कुछ नाथों से ग्रहण करते इस प्रकार कुछ सिद्धों और .,कुछ स्वयं सृजित करते संतों का निर्गुण पंथ आगे बढ़ा जिन्होंने सिद्धों और नाथों की तरह ही अनेक कुरीतियों .,बह्याडाम्बरों ,जात पांत-,गुह्या साधनों का विरोध करते हुए अपने समय के इतिहास में प्रतिसंस्कृति का निर्माण किया

विषय सूची

1. सिद्ध, नाथ और संत साहित्य का परिचय 2. सिद्ध, नाथ और संत साहित्य का परिवेश 3. सिद्ध, नाथ और संत साहित्य की संवेदना के अतंस्संबंध के विविध रूप 4. ब्राह्मणवादी संस्कृति के प्रतिसंस्कृति के रूप में सिद्ध, नाथ और संत साहित्य 5. सिद्ध, नाथ और संतों की भाषा एवं शैली का अतंस्संबंध। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

34. सिंह (धर्मेन्द्र प्रताप)
दिल्ली हिंदी रंगमंच की अवधारणा और विकास की समस्याएं।
निर्देशक : प्रो. अनिल राय
Th 22720

सारांश
(असत्यापित)

स्वातंत्रयोत्तर दिल्ली हिंदी रंगमंच की गतिविधियों का अध्ययन मेरे शोधकार्य का प्रमुख उद्देश्य रहा। स्वतंत्रता से पूर्व दिल्ली में हिंदी भाषा में किस प्रकार की रंगसक्रियता थी-, उससे प्रभावितबिना प्रभावित हुए स्वतंत्रता के बाद - गतिविधियों की धारा दिल्ली में आगे बढ़ी और इन नई एवं पुरानी-के वर्षों में किस प्रकार की रंगरंगयताओं सक्रि- के चलते बाद के वर्षों में दिल्ली हिंदी रंगमंच ने कैसा रूप धारण किया, समग्र रूप से इस दिशा में मैंने अपना शोधकार्य पूरा किया। समयसमय पर दिल्ली हिंदी रंगमंच को जिन संकटों-, कठिनाईयों और चुनौतियों का सामना पड़ा और इन संकटों एवं समस्याओं से जूझते हुए दिल्ली का स्वातंत्रयोत्तर हिंदी रंगमंच आज किस स्थिति में पहुंच चुका है, उसकी क्या उपलब्धियां रही हैं और हिंदी रंगमंच समेत संपूर्ण भारतीय रंगकर्म के विकास एवं स्वरूप निर्धारण में वह कितना सहयोगी और निर्णायक रहा है और उसकी अपनी भूमिका एवं पहचान किसी रूप में बनी है, इन कुछ प्रश्नों को टटोलते हुए इनसे संबंधित जवाब मेरे शोधप्रबंध में उपसंहार रूप में शामिल हैं। दिल्ली हिंदी - रंगमंच का क्षेत्र बहुत व्यापक है। यह देशभर की रंगमंचीय गतिविधियों का केंद्र है, उसका लघुरूप है, उसका प्रतिनिधित्व करता है। दिल्ली रंगमंच भारतीय रंगमंच का झरोखा बन चुका है। दिल्ली हिंदी रंगमंच की यह बड़ी उपलब्धि है। विभिन्न समस्याओं, सीमाओं और कठिनाईयों से जूझते हुए दिल्ली हिंदी रंगमंच ने जो स्तर एवं उपलब्धियां हासिल की हैं, वहीं से इसके भविष्य एवं बेहतर संभवनाओं के मार्ग प्रशस्त होते हैं। दिल्ली हिंदी रंगकर्म आज प्रयोग और प्रस्तुतियों की स्तरीयता के लिए संपूर्ण भारतीय रंगकर्म में अपनी महत्वपूर्ण पहचान कायम कर सका है। पिछले लगभग छः दशक में दिल्ली के हिंदी रंगपटल पर जिस प्रकार की अभूतपूर्व कलात्मक और - प्रस्तुतियां-सृष्टि एवं रंग-बहुस्तरीय रंग संभव हुई हैं, वह उसे देश के किसी भी अन्य भाषा अथवा क्षेत्र की रंग- सक्रियता से बीस साबित करती है।

विषय सूची

1. हिंदी रंगमंच की अवधारणा और स्थानीयता 2. दिल्ली हिंदी रंगमंच का विकास एवं विविध प्रवृत्तियां 3. दिल्ली हिंदी रंगमंच के विकास में विभिन्न रंग-संगठनों, अकादमियों एवं संस्थाओं की भूमिका 4. दिल्ली हिंदी रंगमंच के विकास की समस्याएं और संभावनाएं 5. दिल्ली का रंग-विमर्श 6. दिल्ली हिंदी रंगमंच के विकास में विभिन्न व्यक्तित्वों का योगदान 7. उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

35. सिंह (बीरेन्द्र)
काशीनाथ सिंह के कथा-साहित्य का समाज भाषावैज्ञानिक अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. मोहन
Th 23180

सारांश
(असत्यापित)

हिंदी कथासाहित्य के क्षेत्र में काशीनाथ सिंह का महत्वपूर्ण स्थान है।काशीनाथ सिंह ने अपने कथा साहित्य में - जिस समाज को प्रस्तुत किया है, वह एक स्तरीय नहीं है।परिणामस्वरूप उनके द्वारा चित्रित पात्रों की भाषा में भी विविधता एंव विकल्पन की स्थिति देखने को मिलती है।प्रस्तुत शोध में सर्वप्रथम भाषा की प्रवृतियों पर चर्चा करते हुए भाषा, समाज एंव साहित्य के अंतस्संबंधों को स्पस्ट किया गया है। तत्पश्चात सामाजिक संदर्भ में भाषा परिवर्तन के कारणों पर प्रकाश डाला गया है।इसके पश्चात समाज भाषाविज्ञान की प्रमुख संकल्पनाओं भाषाई - समाज,भाषाई कोष,भाषा विकल्पन,बहुभाषिकता,भाषाद्वैत, कोड मिश्रण,कोड अंतरण,पिजिन,क्रियोल आदि को स्पस्ट

किया गया है तथा समाज में प्राप्त भाषागत वैविध्य को वर्ग,लिंग,जातीयता तथा अस्मिता के माध्यम से समझने क प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध में यह भी बताया गया है कि किस प्रकार से काशीनाथ सिंह का जीवनानुभव उनकी रचनाओं में विषय एंव विचार ही नहीं अपितु भाषा के स्तर तक व्याप्त है।अतः उनके कथासाहित्-य में स्थित विभिन्न प्रसंगों के अंतर्गत प्राप्त भाषाई विकल्पन,कोड मिश्रण,कोड अंतरण, भाषाद्वैत आदि की स्थिति को स्पष्ट किया गया है तथा सामाजिक संदर्भ में उसकी व्याख्या की गई है।अंतिम अध्याय में उनके कथासाहित्य - में उच्च वर्ग एंव निम्न वर्ग के पात्रों की भाषा,अधिकारी एंव अधिनस्थ वर्ग के पात्रों की भाषा, शिक्षित एंव अशिक्षित वर्ग के पात्रों की भाषा,शहरी एंव ग्रामीण वर्ग के पात्रों की भाषा आदि का समाज भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करते हुए उनमें प्राप्त भाषा भेद एंव विकल्पन की स्थिति को दिखाया गया है और सामाजिक संदर्भ में उसकी प्रसंगिकता सिद्ध की गई है।

विषय सूची

1. भाषा का सामाजिक संदर्भ 2. समाज भाषाविाान : स्वरूप एवं प्रासंगिकता 3. काशीनाथ सिंह के कथा-साहित्य में पात्र एवं परिवेश चित्रण की भाषा 4. काशीनाथ सिंह के कथा-साहित्य में समाज भाषावैज्ञानिक संदर्भ ओर प्रसंग 5. काशीनाथ सिंह के कथा-साहितय में विभिन्न वर्गों के पात्रों की भाषा का समाज भाषावैज्ञानिक संदर्भ और प्रासंगिकता। उपसंहार । परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

36. सिंह (रवीन्द्र प्रताप)
कबीर-केंद्रित समकालीन विमर्श ।
निर्देशक : प्रो. श्यौराज सिंह
Th 22728

सारांश
(असत्यापित)

सन् 1997 में कबीर पर आई डा धर्मवीर की किताब.'कबीर के आलोचक' कबीर पर हुए अब तक के शोधमूल्यांकन पर- बड़े प्रश्नचिह्न लगा दिए. कबीर केजन्म , जाति, मातापिता-, गुरु, विचारधारा, प्रक्षिप्त पदों की समस्या आदि पर लकुल नए तरह की बहसे सामने आईं! कबीर के आलोचकों ने किबंदतियों, प्रक्षिप्त पदों के सहारे कबीर की आयु को120/300 वर्ष, माता पिता नीरूनीमा की विधवा ब्राह्मणी की संतान बताया गया. गुरु के रूप में रामानंद को बताया गयाविचारधारा . को वैष्णव परंपरा से जोड़ा गयाधर्मवीर .डा . ने इस पर बड़े प्रश्न खडे किये. उन्होंने ने माना कि प्रक्षिप्त पदों और किंबदंतियों के सहारे कबीरको ब्राह्मण और रामानंद से जिसके कोई ठोस एवं ऐतिहासिक आधार नहीं हैं! यह सिर्फ ब्राह्मणी मिलान एवं कबीर पर बाह्मण ब्राह्मणवाद का कब्जा है !डा. धर्मवीर ने कबीर को 'आजीवक धर्म' और परंपरा का माना है. उन्होंने ने प्रक्षिप्त पदों को बाहर कर कबीर की विचारधारा तय करने की पैरवी की है. इसी संदर्भ में डापुरुषोत्तम अग्रवाल की पुस्तक अकथ. कहानी प्रेम कीकीबर : की कविता और समय भी, कबीरकालीन इतिहास, कबीर के कवित्व, और उनके गुरू पर भाष्य करती है. कबीर के समय को उन्होंने 'देशज आधुनिकता ' का समय बताया, बनियाबाजार- और

नगरीकरण कीउन्नति के तर्क रखेंइन्होंने. आनंदभाष्य आदि ग्रंथों के माध्यम से कबीर को रामानंद का शिष्य बताने का प्रयास किया हैकबीर. पर इनबहसों से ऐसा लगता है कि कबीर पर वास्तव में मुक्त एवं लोकतांत्रिक चिंतन नहीं हो पाया है. बुद्ध, तुलसी,नानक आदि लोगों को पढ़ने में किसी गुरु कीकोई ज़रूर त नहीं महसूस की जाती है. पर कबीर अध्ययन में गुरू प्रश्न प्रथमिक और महत्वपूर्ण क्यों हो जाते हैं! जाहिर है कबीर केअध्यन में सत्ता विमर्श और वर्चस्व काम कर ता है, जिससे कबीरपर न्याय नहीं हो पाता है. रामानंद को कबीर के गुरू साबित करने मात्र से उन्हें हिन्दू महात्मा, वैष्णवउपासक आदिसाबित करने में सुविधा हो जाती है! जबकि कबीर के काव्य में 'ना हिन्दू ना मुसलमान' की ध्वनि है! वे न नमाजी थे, न हीमूर्तीपूजक, वे बहुदेववादी भी नहीं थे. कबीर पर मुक्त एवं लोकतांत्रिक अध्ययन की आवश्यकता आज अधिक है, जि की उनकी सामाजिकसाहित्यिक- उपादेयता को ठीक से रेखांकित किया जा सकेविचार उनके! से साहित्य और समाज का समृद्ध हो सके.

विषय सूची

1. कबीर-विमर्श की परंपरा 2. कबीर-केन्द्रित समकालीन विमर्श के दलित-सन्दर्भ 3. कबीर-केन्द्रित समकालीन विमर्श के स्त्री-सन्दर्भ 4. कबीर-केन्द्रित समकालीन विमर्श के अन्य सामाजिक सन्दर्भ 5. कबीर-केन्द्रित अन्य विमर्श। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

37. सिंह (संजय)
छायावादी कवियों की आलोचना का पुनर्मूल्यांकन।
निर्देशक : डॉ. आशुतोष कुमार
Th 22722

विषय सूची

1. नवजागरण और हिंदी कविता की आधुनिक आलोचना का विकास 2. जयशंकर प्रसाद और आधुनिक काव्यालोचन की दार्शनिक अभिवृत्तियाँ : पुनर्मूल्यांकन 3. सुमित्रानंदन पंत और छायावादी कविता की भूमिका : पुनर्मूल्याकंन 4. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और मुक्ति की अवधारणा : पुनर्मूल्यांकन 5. महादेवी और सौंदर्य की संघर्षमूलक दृष्टि : पुनर्मूल्यांकन 6. छायावादी कवियों के आलाचना कर्म की समकालीन प्रासंगिकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

38.. सैनी (साधना)
प्रगतिशील हिंदी कविता में प्रेम का स्वरूप।
निर्देशक : डॉ. प्रज्ञा
Th 23183

विषय सूची

1. हिन्दी कविता में प्रेम की अवधारणा और स्वरूप 2. आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम की अवधारणा का विकास : परिचय और मूल्यांकन 3. प्रगतिवादी कविता : कलात्मक सरोकार 4. बदलता सौंदर्यबोध

और प्रगतिवादी प्रेम कविता 5. प्रगतिवादी और गैर-प्रगतिवादी कविता में प्रेम 6. प्रगतिवादी प्रेम काव्य-प्रमुख कवि। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

39. सोनल (स्वाति)
समकालीन हिन्दी रंगमंच में लोकधर्मिता।
निर्देशक : डॉ. रमेश गौतम
Th 22723

सारांश
(असत्यापित)

लोकधर्मी प्रस्तुति शैली हमारी भारतीय पारंपरिक प्रस्तुति शैली रही है, जो कि नाट्यधर्मी प्रस्तुति शैली के समकक्ष देखी जा सकती है । औपनिवेशिक रंगमंच के प्रभावस्वरूप हमारी अपनी नाट्यपरंपरा से हमारा सम्बन्ध विछिन्न - सा हो गया था। परन्तु आजादी के पश्चात निज रंगमंच की चाहत व जड़ों की तलाश ने रंगकर्मियों को राष्ट्रीय रंगमंच के निर्माण हेतु एक बार फिर से इस ओर उन्मुख किया । यह तलाश रूढ़ परंपरा के मोह से इतर परंपरा के प्रासंगिक व युगानुकूल प्रयोग पर आधारित रही । यथार्थवादी और प्रोसेनियम के ढाँचे से बाहर गीतसंगीतयुक्त - कल्पनाश्रित रंगमंच जो कि यथार्थ के भ्रम से दूर जीवन की उत्सवधर्मिता को समग्र रूप से रूपायित कर पाने में सक्षम हो, इस ओर रंगकर्मियों का ध्यान गया । विभिन्न रंगकर्मी अपनेअपने तरीके से इस तलाश की ओर उद्यत - तत्वों के प्रासंगिक प्रयोग को -हुए व व्यक्तिगत स्तर के अलावा संस्थानगत स्तर पर भी लोकधर्मी शैली व लोक हिंदी रंगमंच पर बढ़ावा मिला। अस्सी के दशक तक इस क्षेत्र में विभिन्न रंगकर्मी अपनेअपने तरीके से इस शैली - के प्रयोग में सक्रीय दिखे। हबीब तनवीर, बकारंत .व ., बंसी कौल, त्रिपुरारि शर्मा, भानु भारती, सतीश आनंद का रंगकर्म प्रयोगों की इस विविधता की झांकी प्रस्तुत करता है । अपनेअपने तरीके से लोकधर्मी शैली का आधुनिक - सन्दर्भ में अन्वेषण करते हुए इन रंगकर्मियों ने अपनीकि विविधता में भी एकसूत्रता के अपनी राह निकाली जो - दर्शन कराती है। इनके अलावा अन्य रंगकर्मियों ने भी लोकतत्वों व लोकधर्मी शैली का प्रयोग नाटक के कथ्य के - अनुरूप समय समय पर किया है व इसकी शक्ति व संभावना के नए गवाक्षों से हमें परिचित कराया है । अपने शोध प्रबंध में मैंने समकालीन हिंदी रंगमंच में लोकधर्मी प्रस्तुति शैली की स्थिति, मुश्किलों, संभावनाओं व जटिलताओं पर प्रयास डालते हुए समसामयिक दौर में इसके विविध प्रयोगों पर प्रकाश डाला है ।

विषय सूची

1. लोकधर्मिता 2. हिन्दी रंगमंच का विकासात्मक स्वरूप 3. समकालीन हिन्दी रंगमंच 4.समकालीन हिन्दी रंगमंच में लोकधर्मिता 5. समकालीन हिन्दी रंगमंच पर लोकधर्मी प्रयोग 6. उपसंहार : समकालीन हिन्दी रंगमंच में लोकधर्मिता : दशा और दिशा। संदर्भ सूची।

M.Phil Dissertations

01. अब्दुल लतीफ़
हरिशंकर परसाई के व्यंग्य संग्रह प्रेमचंद के फटे जूते में अभिव्यक्त यथार्थबोध का अनुशीलन।
निर्देशक : प्रों. सुधा सिंह

02. अनुरंजन कुमार
राजनीति के कवित्त का समीक्षात्मक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. आशुतोष कुमार

03. कटियार (रवि कृष्ण)
आधुमिक सत्ता-प्रतिष्ठान और हानूश।
निर्देशक : डॉ. मंजु मुकुल काम्बले

04. चौहान (अंकिता)
स्त्री और दलित भाषा के संदर्भ में दलित अस्मिता (पत्रिका) का मूल्यांकन।
निर्देशक : प्रो. मोहन

05. जाँगिड़ (नीलम)
पृथ्वीराज कपूर द्वारा मंचित नाटकों का अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता मलिक

06. नवीन कुमार नीरज
मुक्तिबोध की कहानियों में कहानीपन की समस्या।
निर्देशक : डॉ. अल्पना मिश्र

07. नौशाद अली
दयाप्रकाश सिन्हा कृत ऐतिहासिक नाटक रक्त-अभिषेक का रंगमंचीय अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. निरंजन कुमार

08. प्रशांत रमण रवि
संत पलटू साहिब की बानियों में विद्रोह का स्वर।
निर्देशक : प्रो. अनिल राय

09. पाण्डेय (अमित)
पर्यावरणीय समस्याओं के संदर्भ मं एकांत श्रीवास्तव की कविताएँ।
निर्देशक : डॉ. संजय कुमार

10. भोरिया (संजीव)
नरेंद्र कोहली के व्यंग्य का विवेचनात्मक मूल्यांकन (विशेष संदर्भ- नरेंद्र कोहली : श्रेष्ठ व्यंग्य)
निर्देशक : डॉ. कुमुद शर्मा

11. महर (मेमतारा)
स्त्री विमर्श की दृष्टि से नंददास कृत भँवरगीत का अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. गोपेश्वर सिंह

12. यादव (रवि प्रकाश)
हिन्दी आलोचना में बिहारी (विशेष संदर्भ : पद्मसिंह शर्मा, कृष्णबिहारी मिश्र, लाला भगवानदीन)।
निर्देशक : प्रो. पूरनचन्द टण्डन

13. राम सरोज
मृदुला गर्ग के नाटकों में अभिव्यक्त आधुनिकता बोध।।
निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता मलिक

14. रीना
स्त्री विमर्श की दृष्टि से मतिराम कृत रसराज का अध्ययन ।
निर्देशक : प्रो. राजेन्द्र गौतम

15. विकास कुमार
कस्बाई जीवन के सन्दर्भ में ज्ञानरंजन की कहानियाँ (सपना नहीं के विशेष सन्दर्भ में)।
निर्देशक : प्रो. हरिमोहन शर्मा

16. शर्मा (सुशान्त कुमार)
मीर तक़ी मीर और घनानंद के काव्यों में प्रेम का स्वरूप।
निर्देशक : प्रो. मोहन

17. शुक्ला (शिप्रा)
नासिरा शर्मा के उपन्यास बहिश्ते ज़हरा के परिप्रेक्ष्य में युद्ध और स्त्री।
निर्देशक : प्रो. विनोद तिवारी

18. सिंह (शैलेन्द्र कुमार)
लोकतांत्रिक व्यवस्था के द्वन्द्व और असग़र वजाहत की कहानियाँ।
निर्देशक : प्रो. श्यौराज सिंह

19. सिंह (हरीश)
बोधा कृत इश्कनामा में आधुनिक चेतना।
निर्देशक : डॉ. रामनारायण पटेल